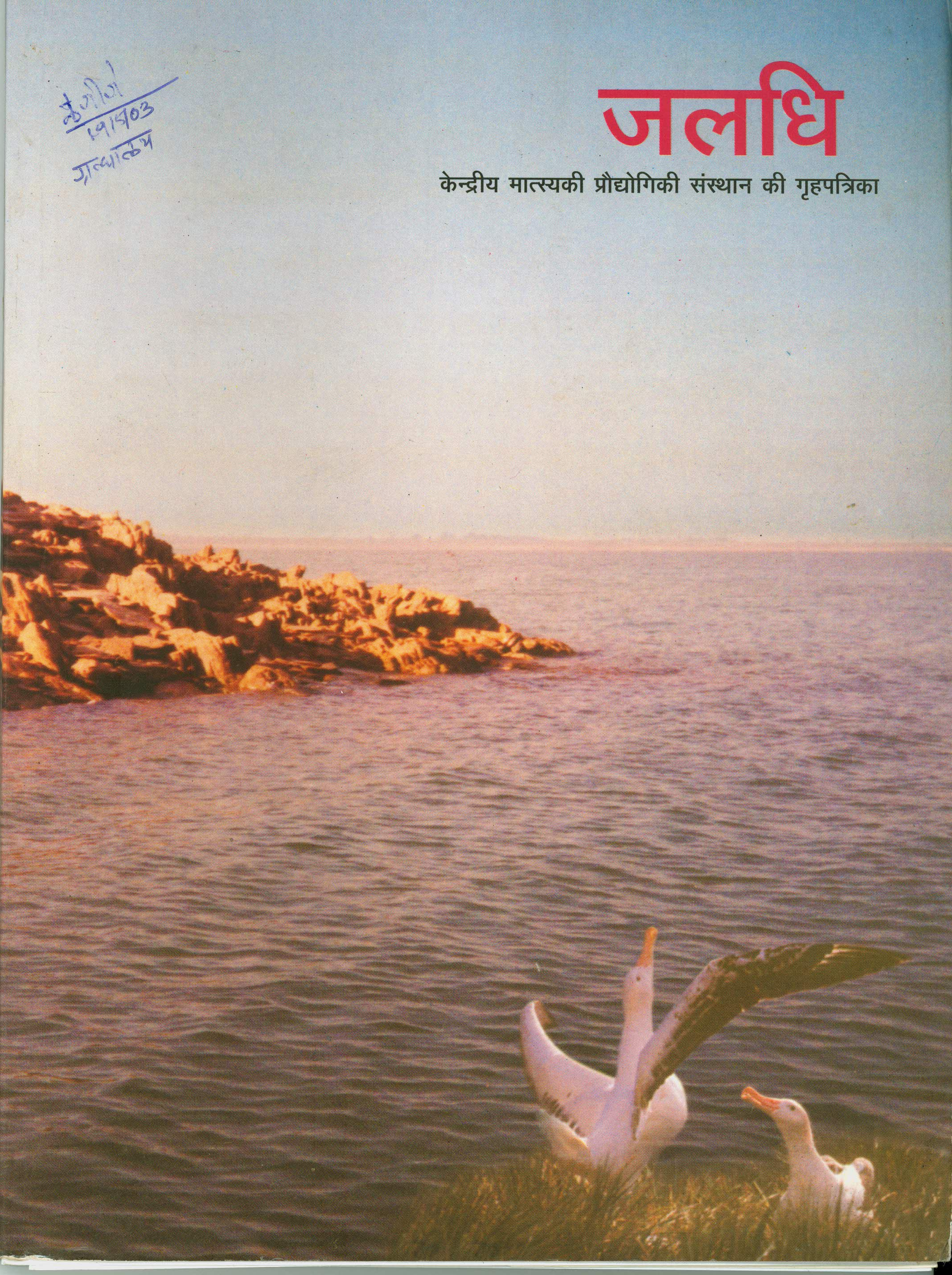

जलधि

केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान की गृहपत्रिका

19/5/03
ग्रन्थालय

जलधि

2003

प्रबन्ध संपादक

डॉ. के. देवदासन

संपादक

डॉ. जेस्सी जोसफ

केन्द्रीय मात्स्यिकी प्रौद्योगिकी संस्थान

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

मत्स्यपुरी, कोचिन - 682 029

भाकृ अनुप
ICAR

विशेष परामर्श : रविकुमार

सहयोग : जी.एन. शारदा
सन्तोष अलेक्स
पी. शंकर
शिबाशिस गुहा

विषय - सूची

		पृ. सं.
1.	निदेशक की ओर से	
2.	संपादकीय	
3.	मत्स्य प्रोटीनों का पोषकीय महत्व	1
4.	मध्यप्रदेश में मत्स्य प्रसंस्करण की वर्तमान स्थिति एवं संभावनाऐं	7
5.	झींगा ट्राल मात्स्यकी में उपपकड़ कटौती - उपकरण का मूल्यांकन	10
6.	कंटिया से मत्स्यन	13
7.	मत्स्य पैदावर में इंधन संरक्षण के प्रस्ताव	18
8.	मत्स्य का जैव रसायन	26
9.	भारतीय खाद्य मत्स्य की जीवाणुवीय गुणता	35
10.	सागरद्वीप में भूआकृतीय परिवर्तन और मात्स्यकी : एक सुदूर संवेदन अध्ययन	43
11.	अन्तर्स्थलीय मात्स्यकी	46
12.	प्राचीन भारत में खाद्य वस्तु के रूप में मत्स्य का उपयोग	49
13.	मात्स्यकी प्रसार और मानव संसाधन	55
14.	स्क्वालीन - स्रोत और अनुप्रयोग	59
15.	स्टैफिलोकॉकी खाद्य विषाक्तन	62
16.	जलकृषि में सूक्ष्मजीवियों की भूमिका	67
17.	मध्यप्रदेश के जलाशय में मत्स्य पैदावार की प्रणालियों	71
18.	के. मा. प्रौ. सं. में पर्यावरण अनुकूल मत्स्यन व मत्स्य संसाधन-एक रिपोर्ट	77

निदेशक की ओर से

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अधीन अहिन्दी प्रदेशों में कार्यरत संस्थानों को सर्वोत्तम राजभाषा कार्यान्वयन के लिए प्रदान किए जानेवाला वर्ष 2001 का राजर्षी टंडन पुरस्कार केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान को प्राप्त हुआ है। संस्थान को इस उत्तम कार्य के लिए यह पुरस्कार दूसरी बार मिल रहा है। मैं संस्थान के राजभाषा विभाग को तथा अन्य सदस्यों को बधाई देना चाहता हूँ जिनके समर्पण बोध के कारण यह पुरस्कार प्राप्त हुआ है। संस्थान के राजभाषा-कार्यान्वयन के तहत कई प्रकार के कार्य आयोजित होते हैं जिन में खास है 'जलधि' नामक गृहपत्रिका का प्रकाशन। इस पत्रिका में वैज्ञानिक अपने-अपने क्षेत्र से संबंधित आविष्कारी कार्यों का परिचय देते हैं। तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी विषयों की भाषा को खास तौर से पारदर्शी बनाना इसका उद्देश्य है। इस पत्रिका के दो अंक निकल चुके हैं जिनकी सभी तबकों के लोगों से उसके विषय चयन और साज-सज्जा के लिए भूरीभूरी प्रशंसा हुई है। यह पत्रिका का तीसरा अंक है जिसे भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के सदस्यों और अन्य मित्रों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे गौरव का अनुभव हो रहा है। सभी मित्रों से यही निवेदन है कि वे अपने सृजनात्मक सुझावों से हमें अवगत कराएं ताकि इसकी स्तरीयता और भंगिमा को संवर्द्धित किया जा सके। विज्ञ मित्रों की टिप्पणी की हमें प्रतीक्षा रहेगी। यदि वे सुझाव मात्स्यकी क्षेत्र के विकास की उपलब्धियों, समस्याओं और भविष्य की दिशाओं को सही मायने में प्रक्षेपित करने में सहायक बनें तो, (उसकी तरफ अभी तक वांछित ध्यान दिया नहीं गया है) हमें बेहद खुशी होगी।

के. देवदासन

डॉ. के. देवदासन
निदेशक

जलधि सागर का पर्यायवाची शब्द है। जलधि अपनी आकार-विपुलता में तथा गहन-गह्वरता में विराटता का परिचय देती है। कई संभावनाऐं उसकी हैं। अननुमेय है वह।

"जलधि" की परिकल्पना में मुख्य रूप से तीन बातों की प्रधानता है। 1- राजभाषा हिन्दी का अब जिस तरह से कार्यान्वयन चल रहा है उसका सही दिशा में प्रयोग। 2- वैज्ञानिकों को हिन्दी के प्रति आकृष्ट करना और उन्हें सक्षम बनाना। 3- अखिल भारतीय पाठक समाज को वैज्ञानिक उपलब्धियों का परिचय कराना। पिछले दो अंकों की सामग्री ने भारत भर के वैज्ञानिकों को तथा संस्थाओं को आकर्षित किया था। यह तथ्य इसलिए महत्वपूर्ण है कि जिस प्रदेश में हिन्दी का कोई वातावरण नहीं, राज्य सरकारी तौर पर हिन्दी के लिए कोई प्रोत्साहन नहीं वहाँ राजभाषा का सक्रिय और जीवन्त कार्यान्वयन चल रहा है। इस जीवन्त कार्यान्वयन में भाषा को मूल्य के रूप में पहचाना गया है। वैज्ञानिकों के समाज के साथ, व्यापक पाठक समाज के साथ अन्तरसंबन्ध के लिए अंग्रेज़ी की तुलना में हिन्दी सशक्त विकल्प हो सकती है। इसी विकल्प में भाषा का मूल्य निहित है।

संस्थान के वैज्ञानिक कार्यकलापों को हिन्दी में प्रस्तुत करते समय मात्र अनुवाद की पूर्ती नहीं हो रही है बल्कि प्रयोगशालाओं की चहारदिवारियों से विज्ञान का विस्तार हो रहा है; मात्स्यकी के क्षेत्र में काम करनेवाली आम जनता केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान के आविष्ककारों से लाभान्वित हो रही है। इस दिशा में हिन्दी की भूमिका विशेष उल्लेख्य है। "जलधि" की महत्वाकांक्षी परिकल्पना में यही तथ्य क्रियाशील है।

मत्स्य प्रोटीनों का पोषकीय महत्व

टी.वी.शंकर, पी.जी. विश्वनाथन नायर

परिचय

जीवन के लिए खाद्य पदार्थ बहुत ज़रूरी है। पोषकाहार की आवश्यकता और प्रक्रिया जीवन के वैविद्य पर निर्भर है। उदाहरण के लिए धूप की क़ीमत पर वायु मण्डल से जल एवं कारबनडाईऑक्साइड से पौधे अपने खाद्य संश्लेषण करने की क्षमता रखते हैं। खाद्य के लिए कीटे अन्य स्रोतों पर निर्भर रहते हैं। यद्यपि खाद्य विभिन्न स्रोतों में उपलब्ध हैं, स्वस्थ जीवन के लिए अच्छी खाद्य वस्तुओं का चयन ज़रूरी है।

मत्स्य में कौन-कौन से पोषक हैं ?

प्रोटीन, कारबोहाईड्रेट, वसा, विटामीन और खनिज आदि शरीर के लिए आवश्यक मुख्य पोषक हैं। प्रोटीन, कारबोहाईड्रेट और वसा प्रमुख पोषक युक्त होते हैं और विटामीन एवं खनिज में अल्प पोषक हैं। प्रमुख पोषकों में भी शरीर निर्माण और अनुरक्षण के लिए प्रोटीन बहुत ज़रूरी है। वह कारबोहाईड्रेट और वसा शक्ति के स्रोत के रूप में कार्य करता है। उपापचय प्रक्रिया के दौरान विभिन्न पोषक जीवन के अनुरक्षण के लिए आवश्यक शक्ति प्रदान करता है। विटामीन एवं खनिज यद्यपि शक्ति की आपूर्ती नहीं करते फिरभी शरीर उपापचय के लिए मुख्य भूमिका निभाते हैं। सामान्य जीवन के अनुरक्षण में सभी पोषक अपनी-अपनी भूमिका निभाते हैं। सभी प्रकार की खाद्य वस्तुओं में ये सभी पोषक उपस्थित रहते हैं। मगर उनके अनुपात भिन्न होते।

प्रोटीनों की प्रकृति

प्रोटीन जैविक अणु है जो एमीनो अम्ल जैसे निर्माण एकक से बना है और दोनों पेपटैड बंध से जुड़ा है। प्रोटीन एकल पॉली पेपटैड चेन से या कई पॉली पेपटैड से बना एक बृहत् अणु है। जीवन-प्रणाली में निश्चित रूप से उसकी भूमिका है। कोशिकाओं की आनुवंशिक सामग्री, यानी न्यूक्लिक अम्ल में निहित विशेष अनुदेशों के अनुसार प्रोटीन बनता है। विशेष प्रोटीन के एमीनो अम्ल की श्रेणी को यही निश्चित करता है और बगल के चेन समूह के एमीनों अम्ल इस के अच्छे आकार और विन्यास को निर्धारित करता है। अंतिम विन्यास ही प्रोटीन अणु का कार्य

एवं गुण का निर्धारण करता है। खाद्य सामग्री का प्रोटीन, जो पौधे या प्राणी-श्रेणी का होता है, उसी रूप में शरीर द्वारा उपयोग नहीं किया जाता। पचन एन्ज़ाइमों की प्रक्रिया द्वारा एमीनो अम्ल के मूल यूनिटों में वह टूट जाता है। एमीनो अम्ल रक्त में घुल जाता और शरीर के विभिन्न भागों में फैल जाता है जहाँ पर वह अपने कार्य का निर्वाह करता है।

जीवन प्रणाली में प्रोटीनों की भूमिका

प्रोटीन जीवन प्रणाली की प्राथमिक आवश्यकता है और वह विभिन्न प्रकार का कार्य करता है। शरीर निर्माण और शरीर में प्रोटीन-संश्लेषण के लिए आवश्यक एमीनो अम्ल उपलब्ध कराना ग्रहित प्रोटीनों का मुख्य कार्य है। कोशिकाओं और ऊतक की आकार संबंधी संरचना के लिए प्रोटीन आवश्यक है जो एन्ज़ाइम, होर्मोन, प्रतिजैविक जैसे विभिन्न आवश्यक संमिश्रणों का उत्पादन करता है। यह इलक्ट्रोलेट संतुलन और रक्त स्थिरता में भी भूमिका अदा करता है। इसके अलावा उपापचय-चक्र के ज़रिए प्रोटीन का दहन करता है जो शरीर के लिए आवश्यक शक्ति उत्पन्न करता है। प्रोटिन का प्रत्येक ग्राम 4 KCAL की शक्ति प्रति ग्राम उपलब्ध करा सकता है।

ज़रूरी एमीनो अम्ल

प्राणी एवं पौधों में उपलब्ध प्रोटीनों का स्रोत मूलतः 20 विभिन्न एमीनो अम्ल से बना है। विशेष स्रोत के प्रोटीन का कार्य प्रोटीन अणु में एमीनो अम्ल की मात्रा एवं व्यवस्था द्वारा निर्धारित होता है। कुछ एमीनो अम्ल ऐसे हैं जो प्रणाली में संश्लेषित नहीं होते हैं। लेकिन उन्हें भोजन में उपलब्ध कराना भी है। प्रोटीन की गुणता का ज्यादा प्रभाव उपयुक्त स्तर में इनकी अनुपस्थिति या उपस्थिति पर निर्भर रहता है। इन्हें ज़रूरी एमीनो अम्ल कहा जाता है। 20 से ज्यादा एमीनो अम्ल, अरजीनीन, हिस्टडीन, लाइओसीन, एलीओसीन, लइसीन, मेथीओनीन, फीनीललीनीन, टईरोसीन, ट्रिप्टोफन और वलीन आदि ज़रूरी एमीनो अम्ल हैं। भोजन में ज़रूरी एमीनो अम्लों की कमी प्रत्येक व्यक्ति में प्रोटीन-कमी की बीमारियों को उत्पन्न कर सकती है। उम्र के साथ-साथ शरीर की प्रणाली के लिए ज़रूरी एमीनो अम्लों की आवश्यकता कम होती है। वृद्ध लोगों के शरीर के अनुरक्षण के लिए सीमित प्रोटीन की आवश्यकता होती है। युवा लोगों में, प्रोटीन संश्लेषण और अनुरक्षण बहुत ही आवश्यक है। इसलिए पर्याप्त मात्रा में इन एमीनो अम्लों की आवश्यकता होती है। यह आकलित किया गया है कि शिशुओं को ज़रूरी एमीनो अम्ल के संतुलित मिश्रण के करीब 37% का कुल नईट्रोजन की आवश्यकता है। युवाओं के लिए कुल नईट्रोजन आवश्यकता केवल 15% होती है।

अन्य स्त्रोतों के प्रोटीनों से मत्स्य प्रोटीन उन्नत है

जल, प्रोटीन, वसा, कार्बोहाईड्रेट और खनिज जैसे मूल घटकों का मिश्रण ही खाद्य प्रणाली है। जल को छोड़कर अन्य घटकों को मूलतत्व कहा जाता है। ये घटक विभिन्न खाद्यों में विभिन्न अनुपात में उपस्थित होते हैं। पौधों से उत्पन्न खाद्य, जैसे अनाज एवं दाल में ज्यादा मात्रा में कार्बोहाईड्रेट है और तत्काल शक्ति-स्त्रोत के रूप में कार्य करता है। दूसरी ओर पशुधन और मत्स्य वसा, प्रोटीन और खनिज के प्रमुख स्त्रोत हैं। ज़रूरी कार्य करने के अलावा ये शक्ति के प्रमुख स्त्रोत के रूप में कार्य करते हैं।

मत्स्य में औसतन 10-22% प्रोटीन, 1-20% वसा, 0.5-5% खनिज और कम मात्रा के कार्बोहाइट्रेएट निहित हैं। मत्स्य के प्रोटीन की मात्रा जाति और प्रकार, आयु, पोषकों की स्थिति पुनरुत्पादनचक्र आदि पर आधारित है। एक ही मत्स्य के विभिन्न भागों में प्रोटीन की मात्रा और स्वभाव बहुत भिन्न रहते हैं। जैसे मांस के अंतरी एवं बाह्य भागों में प्रोटीनों के बीच विशेष परिवर्तन देखा जा सकता है। महीन एवं दृढ़ मांस के बीच भी भिन्न होते हैं। विभिन्न मत्स्यों के बीच ट्यूणा के मांस में प्रोटीन सब से ज्यादा है जैसे अल्बाकोर ट्यूणा के फिलेट में 26.4 + 1.3% और स्किपजैक की मांसपेशीयों में 27.2 + 0.8%।

अन्य कई स्त्रोतों के प्रोटीनों की तुलना में मत्स्य प्रोटीन श्रेष्ठ है। इस का विशेष सहायक तथ्य है कम मात्रा के सहायक ऊतक प्रोटीन, पीठिका और/या, कोलोजन। औसतन प्रोटीन एवं 1-3% पीठिका प्रोटीन के मुख्य सम्मेलन, 70-79% माईओ-फीब्रीलर प्रोटीन, करीब 18-25% सरकोप्लस्मिक प्रोटीन मुख्यतः साईटोप्लस्मिक मूल के एन्ज़ाइमों से सम्मेलित होते हैं। फिर भी शार्क के मांस में और उपास्थिमीन श्रेणी से संबंधित मत्स्य में 10% का स्तर पीठिका प्रोटीन की मात्रा ज्यादा हो सकती है। मत्स्य मांस की तुलना में, खरगोश और बीफ में 16-28% सरकोप्लस्मिक प्रोटीन, 39-68% मईओफीब्रिलार प्रोटीन और 16-20% पीठिक्त प्रोटीन निहित हैं। पीठिका प्रोटीन की उच्च मात्रा उनके सख्त स्वाभाव एवं अल्प पचनीयता के लिए जिम्मेदार है। प्रोटीनों के विशेष स्वभाव द्वारा उच्च पचनीयता और मृदु स्वभाव की विशेषता मत्स्य मांस की है।

पौधा प्रोटीन बनाम मत्स्य प्रोटीन

ज़रूरी एमीनो अम्ल की उपस्थिति प्रोटीन की गुणता निर्धारित करती है। अपर्याप्त मात्रा के कारण पौधों के प्रोटीन सामान्य समझा जाता है और ज़रूरी एमीनो अम्ल का संतुलन इन अम्लों का पूरक प्राणी मूल से अच्छा होता। चावल एवं दालों को छोड़कर अन्य सभी पौधे प्रोटीनों में ज़रूरी एमीनों अम्ल पाये जाते हैं। इसलिए उसे सामान्य गुणता का समझा जाता है। लाईसीवन

सारणी 1. मनुष्य के लिए आवश्यक एमीनो अम्ल

आवश्यक एमीनो अम्ल	एफ ए ओ डब्ल्यू एच ओ, आयू		
	2-5	10-12	प्रौढ़
हिस्टडीन	19	19	13
आईसालूसीन	28	28	13
लूसीन	66	44	19
लाईसीन	58	44	16
मेथीओनीन अ सिस्टीम	25	22	17
पीनीललनीन अ थाईरोसीन	63	22	19
थीशिओनीन	34	28	9
ट्रिक्टोफन	11	9	5
वलीन	35	25	13

सारणी 2 - पशुधन मांस एवं मत्स्य मांस की तुलना

	अन्न दले	वनस्पति	पशुधन मांस	मत्स्य मांस
जल (%)	9-12	75-93	65-80	66-84
प्रोटीन (%)	2-23	0.6-6.8	16-22	15-24
लिपिड (%)	1-16	0.1-2.1	1.5-13	0.1-22
कारबोहाईड्रेट (%)	20-70	1.5-13	0.5-13	1-3
खनिज (%)	0.5-0.7	0.2-4.6	1.5 या कम	0.8-2

में धान्य प्रोटीन कम होता है जबकि दाल में एमीनो अम्ल ज्यादा होता है।कम अनुपात सल्फार अंतरविष्ठ एमीनों अम्ल होता है। मांस इन अम्लों का अच्छा पूरक है और इसीलिए उच्च गुणता प्रोटीन के स्रोत के रूप में देखा जाता है। मत्स्य प्रोटीन मांस स्रोत के प्रोटीन समान समझा जाता है। मत्स्य प्रोटीन की मात्रा ज़रूरी एमीनो अम्ल में 30% पौधे प्रोटीन से उच्च होता है। सही अनुपात में विभिन्न प्रोटीनों के उपयुक्त मिश्रण द्वारा प्रोटीन मूल्य का खाद्य बढ़ाया जा सकता है। टैपियोका और मत्स्य के प्रोटीन एवं कार्बोहाइड्रेट के संबंध में मिश्रण आदर्श संतुलित आहार समझा गया है।

सारणी 3. खाद्य पदार्थ का पोषणीय मूल्य

	बी वी	एन पी यू	पी ई आर
मांस	74	76	3.2
मत्स्य	80	74	3.5
चावल	80	77	1.7
दल	72	54	1.7

प्रोटीनों के पोषकीय मूल्य

पचनीयता एमीनो अम्ल के संयोजन के अलावा प्रोटीन की गुणता को निश्चित करने वाला तथ्य है। प्रोटीएस निरोधक की उपस्थिति के कारण पौधे प्रोटीनों में पचनीयता की क्षमता कम होती है। मत्स्य में इन निरोधकों की मात्रा बहुत ही नगण्य होती है। परीक्षण प्राणियों पर चारा परीक्षण के संचालन द्वारा प्रत्येक प्रोटीन का पोषक मूल्य प्राप्त किया जा सकता है। निवल प्रोटीन उपयोग (एन पी यू) और प्रोटीन क्षमता अनुपात (पी ई आर) का रासायनिक मूल्य है प्रोटीन गुणता के मूल्यांकन के लिए उपयोगी रासायनिक इन्डीसीस। प्रोटीन-उपयोग का प्रायोगिक प्राणी प्रति यूनिट वज़न में पी ई आर का वज़न ज्यादा होता है। भोजन द्वारा ग्रहण किये और शरीर में उपलब्ध नईट्रोजन के अनुपात को रासायनिक मूल्य कहा जाता है जो कि प्रोटीन की पचनीयता का आकलन देता है। तीसरा तथ्य एन पी यू कुल उपयोग विरुद्ध उपयोगी प्रोटीन को निर्धारित करता है। कई आवश्यक एमीनो अम्ल के प्रोटीन की कमी लक्टलबुमीन की तुलना में बी वी कम होता जो कि उच्च प्रोटीन समझा जाता है। सामान्यतः पौधा मूल के प्रोटीन से प्राणी प्रोटीन बी वी उच्च होता। बी वी और एन पी यू में पौधा प्रोटीन एवं मांस प्रोटीन से मत्स्य प्रोटीन उच्च है।

मत्स्य प्रोटीन का औषध और चिकित्सा विज्ञान में अनुप्रयोग।

शक्ति का स्रोत और शरीर-कार्य के लिए अनिवार्य होने के साथ, प्रोटीन का विशेषकर मत्स्य स्रोत का, विशेष औषध-विज्ञानीय गुण भी है। रक्त कोलेस्ट्रॉल स्तर को कम करने में मत्स्य प्रोटीनों का विशेष प्रभाव है। चुहों पर किए गए अनुसन्धान कार्यों से यह पता चला है कि रक्त कोलस्ट्रॉल स्तर को कम करने में मत्स्य प्रोटीन की सकारात्मक भूमिका है। यह प्रभाव उसके एमीनो अम्ल संयोजन से संबंधित है विशेषकर एलनीन से प्रोलीन अनुपात में।

ताईसीन से अरजीनीन का अनुपात, आईसोलुसीन का अनुपात, लुसीन, त्रीओनीन, टाईरोसीन और सरीन से आरजीनीन, ग्लाईसीन, गुटमीक अम्ल और ग्लूटमीक अम्ल के अनुपात से आवश्यक एमीनो अम्ल भी इस प्रभाव के सहायक संकट तथ्य के रूप में प्रस्तावित किये गये हैं। मत्स्य कोलोजन से बने कोलोजन फिल्म और झींगा, केंकट जैसे क्रस्टेशियन के कवच से बना कैटोसन दंत शल्य चिकित्सा एवं जलन के उपचार में मूख्य भूमिका निभाते हैं।

यह भी प्रमाणित हुआ है कि 15-20% स्तर तक के मत्स्य प्रोटीन किसी भी प्रणाली के लिए आवश्यक और अनावश्यक एमीनो अम्ल पूर्णतः प्रदान करता है।

इस प्रकार मत्स्य प्रोटीन अपनी उन्नत मात्रा की ज़रूरी एमिनो अम्ल, संयोजी ऊतक की कम मात्रा, आसान पचनीयता और समीकरण और प्रणाली में उत्पन्न करने वाले कुछ जैविक आलिप्तता आदि के कारण बेराक किसी भी अन्य स्रोत के प्रोटीनों से बेहतर है। इसलिए मांस के एवज के रूप में मत्स्य प्रोटीन शरीर को पुष्टिकर बनाता है। वह सामान्य स्वास्थ्य को सुधारता भी है।

मनुष्य के लिए आवश्यक एमीनो अम्ल, अन्न वनस्पति और मांस की तुलना में मत्स्य खाद्य पदार्थ के रूप में मांस, चावल और दालों की तुलना में मत्स्य का पोषणीय मूल्य सारणी 1-3 में प्रस्तुत किया गया है।

मध्यप्रदेश में मत्स्य प्रसंस्करण की वर्तमान स्थिति एवं संभावनाएँ

राजेन्द्र बडोनिया

नवीनतम आंकड़ों के अनुसार मध्यप्रदेश का कुल मत्स्य उत्पादन 1.30 लाख टन है। यह शीघ्र ही बढ़कर 2 लाख टन हो जायेगा। संपूर्ण उत्पादन मनुष्य के भोजन के रूप में प्रयुक्त होता है। कुल उत्पादन का 83 प्रतिशत ताजे एवं प्रशीतन रूप में, 9 प्रतिशत भुने हुए रूप में एवं 8 प्रतिशत सूखे रूप में उपयोग होता है। यहाँ पर कतला, रोहू, म्रगल, तिलापिया, सिंघाड़ा, मागुर, सिंघी आदि मुख्य मछलियां हैं। झींगे में मालक्मसोनी (भारतीय नदी झींगा) तथा सीपी में (लैमलीडैंस कोरीएनस) तथा केकड़े उपलब्ध हैं। इनके प्रसंस्करण की वर्तमान स्थिति तथा संभावनाओं का विवरण इस शोध पत्र में दिया गया है।

वर्ष 1999-2000 में भारत का कुल मत्स्य उत्पादन 56 लाख टन था। इसमें से 28.20 लाख टन समुद्री तथा 27.80 लाख टन मीठे पाने से था (भारत सरकार, 2000), (आकृति - 2)। भारत का समुद्री खाद्य पदार्थ का निर्यात इस अवधि में 3.40 लाख टन था, जिसका मूल्य 5096 करोड़ रूपये था। कुल निर्यात मूल्य का 67 प्रतिशत झींगे से प्राप्त होता है (आकृति - 3)। जापान, अमेरिका, यूरोप एवं दक्षिण एशिया आदि मुख्य बाजार हैं। मध्य प्रदेश भारत के बड़े राज्यों में से एक है एवं यहां केवल मीठे पानी के मत्स्य संसाधन उपलब्ध हैं। विगत तीन वर्षों 1997-1998, 1998-1999 तथा 1999-2000 में राज्य का मत्स्य उत्पादन 1,15,161, 1,19,592 तथा 1,27,429 टन रहा है (मत्स्य विभाग की रिपोर्ट, 1999-2000) (आकृति - 1)। यह उत्पादन शीघ्र 2 लाख टन हो जायेगा (गोपकुमार, 1999)। मध्यप्रदेश का कुल क्षेत्रफल 4,43, 446 वर्ग किलोमीटर है। राज्य का विभाजन 1.11.2000 मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ राज्यों में हो गया। वर्तमान मध्यप्रदेश का क्षेत्रफल 3,08,313 वर्ग किलोमीटर है। राज्य में 20,661 किलोमीटर नदियां, 2.94 लाख हेक्टर बड़े बांध तथा 1.2 लाख हेक्टर तालाब हैं। राज्य में 200 से अधिक बड़े एवं मध्यम जलाशय, 8,000 सिंचाई के तालाब तथा 1 लाख अन्य तालाब मत्स्य उत्पादन के लिये उपलब्ध हैं। नर्मदा, बेतवा, चम्बल, तापती, महानदी तथा बेनगंगा आदि राज्य की मुख्य नदियां हैं। नर्मदा घाटी का क्षेत्रफल 95,726 वर्ग किलोमीटर है तथा इसका 81 प्रतिशत भाग मध्यप्रदेश में है। नर्मदा नदी पर बनने वाले नर्मदा सागर, सरदार सरोवर एवं अन्य बांधों से 2.6 लाख हेक्टर अतिरिक्त जल-क्षेत्र मत्स्य उत्पादन के लिये उपलब्ध हो जायेगा। इससे मध्य प्रदेश

के मत्स्य उत्पादन में काफी वृद्धि होगी।

मध्य प्रदेश का 80 प्रतिशत मत्स्य उत्पादन तालाबों में मत्स्य पालन द्वारा, 13 प्रतिशत जलाशयों से एवं 7 प्रतिशत नदियों से प्राप्त होता है (तुली, 2000) (आकृति - 4)। राज्य का सम्पूर्ण मत्स्य उत्पादन भोजन के रूप में प्रयुक्त होता है। नवीनतम अनुमान के अनुसार राज्य में 83 प्रतिशत मछली ताजे एवं बर्फ में संरक्षित रूप से प्रयोग में लाई जाती है। 9 प्रतिशत मछलियां एवं झींगे सूखे रूप में एवं 8 प्रतिशत धुएँ द्वारा संरक्षित करके प्रयोग में लाए जाते हैं (आकृति - 5)। राज्य में मछलियों को हिमीकृत (फ्रोजन) करने का एक भी संयत्र नहीं है। इससे राज्य में उपलब्ध मत्स्य संसाधनों के निर्यात में बड़ी बाधा है। विश्व में कुल मत्स्य उत्पादन का 50 प्रतिशत ताजे अथवा बर्फ में संरक्षित, 30 प्रतिशत हिमीकृत रूप में एवं 20 प्रतिशत सूखे, नमकीन एवं अन्य रूपों में प्रयुक्त होता है। मध्य प्रदेश में मत्स्य का अन्य औद्योगिक उत्पादनों में प्रयोग न होना मत्स्य प्रसंस्करण उद्योग की प्रारंभिक अवस्था के कारण है।

भारत ने वर्ष 1999-2000 में कुल 3.40 लाख टन मत्स्य उत्पादनों का निर्यात किया जिसका मूल्य 5096 करोड़ रूपये से अधिक था। इसमें हिमीकृत झींगे का योगदान मात्रानुसार 26 प्रतिशत एवं कीमत अनुसार 67 प्रतिशत था। निर्यात के अन्य उत्पादों में हिमीकृत मछली, मोलस्क, लोब्स्टर, शार्कपंख आदि शामिल हैं। भारत से निर्यात मुख्यरूप से जापान, अमेरिका, यूरोपियन संघ, मध्यपूर्व एवं दक्षिणपूर्व एशियाई देशों को होता है। मीठे पानी के मत्स्य उत्पादों के निर्यात के बारे में अलग से जानकारी उपलब्ध नहीं है। मीठे पानी से मुख्यरूप से झींगे (स्केम्पी) का निर्यात होता है। मध्य प्रदेश में 104 से अधिक मछलियों की प्रजातियां पायी जाती हैं (दुबे, 1964)। आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण मत्स्य संसाधनों में 45 प्रजातियां मछलियों की, 6 प्रजातियां झींगे की, 2 प्रजातियां मोलस्क की तथा 1 प्रजाति केकड़े की चिन्हित की गई है (बडोनिया, 2001)। इनमें कतला, रोहू, मिर्गल, तिलापिया, कॉमन कार्प, कालबसू, माहसीर आदि मुख्य हैं। चन्ना प्रजातियां, सिंघाड़ा, वेलागो तथा बाम आदि बहुतायत से मिलती हैं। इनसे निर्यात योग्य फिलेट, स्टीक्स, फिंगर्स बनाये जा सकते हैं। उच्च गुणवत्ता के सीपी के संसाधन बेतवा एवं तवा नदियों में अच्छी मात्रा में उपलब्ध हैं। इनकी निर्यात-बाज़ार में बहुत मांग है जिसे राज्य से पूरा किया जा सकता है। झींगे राज्य की बेनगंगा नदी (जिला बालाघाट) में अच्छी मात्रा एवं गुणवत्ता में उपलब्ध हैं। इनका पालन भी जिले के तालाबों में किया जा रहा है। झींगे की घरेलू एवं निर्यात-बाज़ार में अच्छी कीमत मिल रही है। मध्य प्रदेश में केकड़े की एक प्रजाति पेराटेलीफ्यूसा जेक्वामोन्टी उपलब्ध है जिसका मांस स्वादिष्ट एवं उच्च गुणवत्ता वाला है। राज्य में उपलब्ध मत्स्य संसाधनों से उत्पादन जैसे सूखी मछली, भूनी हुई मछली एवं अचार आदि तैयार किया जा सकता है। औद्योगिक उत्पादों में एयर ब्लेडर से आईसिंग ग्लास का निर्माण किया गया और यह बीयर को साफ करने में उपयोगी सिद्ध हुआ। मछली के स्केल्स तथा मोलस्क के शंखों से सजावटी वस्तुएं बनाई जा सकती हैं।

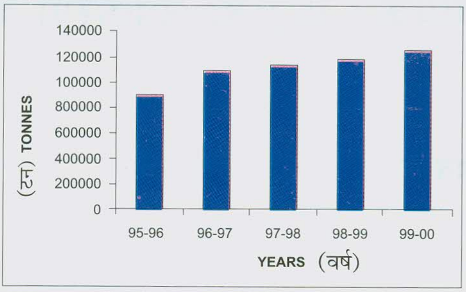

आकृति 1 - मध्यप्रदेश में मत्स्य उत्पादन

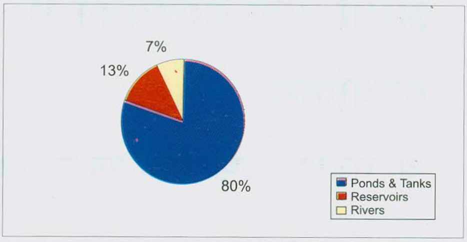

आकृति 4 - मध्यप्रदेश में मत्स्य उत्पादन के स्रोत

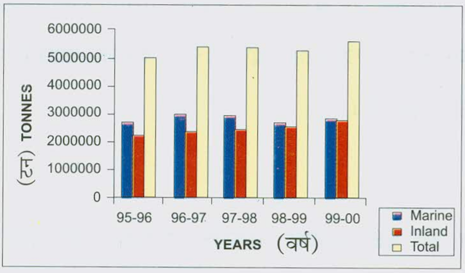

आकृति 2 - भारत में मत्स्य उत्पादन

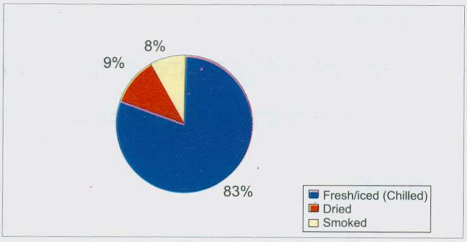

आकृति 5 - मध्यप्रदेश में मत्स्य उपयोग

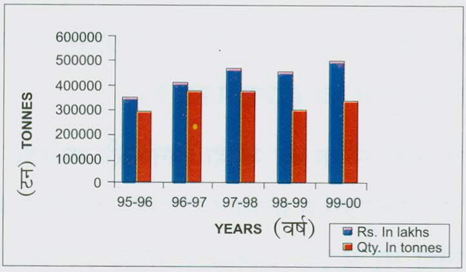

आकृति 3 - भारत से समुद्री उत्पाद का निर्यात

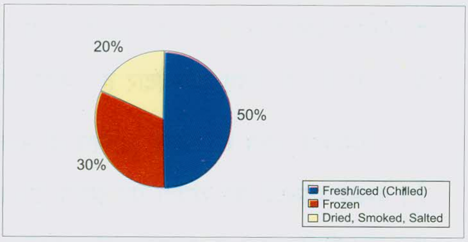

आकृति 6 - विश्व में मत्स्य उपयोग

झींगा ट्राल मात्स्यकी में उपपकड़ कटौती-उपकरण का मूल्यांकन

जी. राजेश्वरी, रघुप्रकाश, एम.पी. रमेशन

सागरसंपदा की समुद्री यात्रा के दौरान झींगा ट्राल्स द्वारा तरुणों को हटाने के लिए तीन भिन्न आकारों के चौकोर मेश कोड एंड पर इस अध्ययन से मूल्यांकन किया गया। यह अध्ययन कोचिन और मैंगलूर के बीच के दक्षिण पश्चिमी तट पर चलाया गया। 35 मि मी का चौकोर मेश कोड एंड उपपकड़ को दूर करने में प्रभावकारी रहा है।

भूमिका

वाणिज्यपरक ट्राल द्वारा अलक्षित जाति को बंदी बनाना अंतर्राष्ट्रीय चिंता की बात है। अच्छे आर्थिक फायदे के कारण यंत्रीकृत मत्स्यन उद्योग पूरी तरह झींगा मत्स्यन पर आधारित है। प्रचालित ट्राल्स के मेश आकार होता है। प्रबल कटौती से तरुणों का नाश की। पूर्वी तट में प्रचालित भिन्न मत्स्यन गिअरों में गिल जाल और लॉन लाईन चुने हुए गिअर हैं ट्रालिंग-उपपकड के उच्च दर के लिए जिम्मेदार है। फंसे अलक्षित जीवों को हटाना पडता है।

उपपकड जात के पश्च ट्रालिंग के बाद के मृत्यु संख्या की ज्यादा जानकारी उपलब्ध नहीं हैं। इससे भविष्य की संपदा पर झींगा ट्रालिंग का नकारात्मक प्रतिघात होता है। ट्राल्स के कोड एंड में चौकोर मेश के पैनल्स को लगाकर दुनिया भर में छोटे आकार के मत्स्य उप पकड की समस्याओं को कम किया गया है। (रोबर्टसन, 1983, ब्रोडहस्ट, वे नेली, 1995) एन सुब्रमण्य पिल्लै (1998) ने पिछले एक दशक में झींगा ट्रालस के अवतरण का पुनरीक्षण किया और उपपकड़ के उच्च दर 70-90% की सूचना दी। इसमें से 40% तरुण थे। सुजाता (1996) ने विशाखपटणम उपपकड अवतरण का पुनरीक्षण किया जिसमें 66.6 से 94.2% तरुण थे। राजेश्वरी एट आल ने विशाखपटणम तट के ट्राल्स के कोड एंड मेश आकार का अध्ययन किया।

इस प्रपत्र में चौकोर मेश कोड एंड मेश आकार के निष्पादन का मूल्यांकन किया गया है ताकि प्रग्रहण के समय अलक्षित समुदाय को कम क्षति पहुँचे और चौकोर मेश पेनल्स के लिए उपयुक्त अभिकल्पना विकसित करें जिससे उपपकड को अलग किया जाय।

सामग्री और तरीके

यह अध्ययन 2001 में दक्षिण पश्चिमी तट पर हुआ। सागर संपदा में 38 मीटर एच एस डी टी ट्राल में 40 मी मी, 35 मी मी और 30 चौकोर मेश और डायमेंड मेश वियोज्य कोड के सहारे यह चयनात्मक अध्ययन हुआ। दोनों कोड एंड में 20 मीटर मेश आकार के अतिरिक्त कवर कोड एंड से ढके गए ताकि बचकर निकले तरुण को पकडा जाय। इस कोड एंड को प्रेबिकेट करने के लिए 1.5 मी मी एच ही पी ई ट्वाईन द्वारा नेटिंग किया गया। 40 मि मी, 35 मि मी और 30 मि मी चौकोर मेश कोड एंड को उसी आकार के डायमेंड मेश कोड एंड से तुलना की गई। कोचिन और मेंगलूर के बीच 70-250 मी मी गहराई में 26 ट्रॉल किय गया। चौकोर और डायमेंड मेश कोड एंड तुलनात्मक अध्ययन के साथ किया गया। तुलनात्मक अध्ययन चौकोर और डायमेंड मेश कोड एंड से उसी जगह अतिरिक्त ट्राल किया गया। हर एक ह्रस्व तंतु के बीच अतिरिक्त कोड एंड से बचकर निकले मत्स्यों को अलग किया गया। बचकर निकली पकड और कोड एंड पकड द्वारा गोरफोमेट्रिक विश्लेषण किया गया।

परिणाम और चर्चा

डायमेंड और चौकोर मेश कोड एंड से बचकर निकले मत्स्यों की औसत लंबाई का विवरण सारणी 1 में दिया गया है।

परिणाम ने यह दिखाया कि तीन चौकोर मेश कोड एंड सभी अलक्षित जात को निष्कासित करने में प्रभावकारी रहा, जबकि पकड़े गए पर कोई प्रभाव नहीं था। चौकोर मेश से एपिपनेफाल्स किया गया। 40 मी मी चौकोर मेश कोड एंड से मध्यम आकार के नेमीट्रेडस बचकर निकल गए। 35 मी मी चौकोर मेश कोड एंड से 60-80 मि मी प्लाटिसेफालस, 60-65 मि मी आकार के एपिनेफालस और 160-190 मि मीनेमिट्रिडस बचकर निकल गए। इस कोड एंड ने उपपकड

सारणी 1. चौकोर मेश और डायमेंड मेश कोड एंड से बढकर निकते मत्स्यों का व्यौरा

जाति	40 मि मी डायमेंड	35 मि मी डायमेंड	35 मि मी चौकोर	30 मि मी डायमेंड	30 मि मी चौकोर
एपिनेफलेस डिकन्थस	70 - 90 mm	40.75 mm	60-65 mm	-	-
नेमिट्रव एस पी पी	100-110	40-85	170-190	-	-
सोरिडा टूंबिल	130-140	-	-	-	-
प्लाटिनेफाल्स	65-70	-	60-80	-	-
सिनोग्लोसस	140-150	-	-	-	-
प्लीसियोनिका एनसिस	-	30-60	50-60	-	70-80

को पूरी तरह निष्कासित किया। प्रत्येक जाल जिससे 100-200 कि ग्राम और 2-3 महीने के आयुवाले प्लेटिसेफालस और एपिनिफेलस तरुण चौकोर मेश से बचकर निकल गए और जिंदा अवस्था में एक्स्ट्रा कवर में छोड दिया गया। 30 मि मी चौकोर मेश कोड एंड केवल 60-70% छोटे आकार के मत्स्य को निष्कासित किया, बाकी उपपकड कोड एंड में पाया गया।

सभी तीन चौकोर मेश कोड एंड से तुलना की गयी। चौकोर मेश कोड एंड ज्यादा उपपकड को निष्कासित करता है। 35 मि मी चौकोर मेश ने पूरी तरह तरुणों को निष्कासित किया, जबकि 30 मि मी चौकोर मेश कोड एंड ने 60-70% उपपकड को ही निष्कासित करता है।

ब्रोडहस्ट एंड केनली (1995) ने दिखाया है कि छोटा चौकार मेश पेनल जो कोड एंड के अंदरूनी भागों में लगाया गया है जिससे छोटे मत्स्य बचकर निकल जाते हैं और झींगे का घाटा भी नहीं होता है। सुजाता (1996) ने इस ओर ध्यान दिया है कि उपपकड की वृद्धि 1982 में 3.7 लाख से 1984 में 6.9 लाख थी। सुधाकर, (1989) ने सूचित किया है कि बड़े ट्रालर और छोटे ट्रालर उपपकड के 10% अवतरण करते हैं, सोना बोट उपपकड के 50% अवतरण करते हैं और छोटे ट्रालर उपपकड के 60% अवतरित करते हैं। राजेश्वरी एट अल (1991) ने कि विशाखपटणम से संचालित ट्रालें का मेश आकार तरुणों के गुण को बनाए रखने में अनुकूल परिणाम से कम हैं।

परिणाम यह है कि डायमेंड मेशों की तुलना में सभी तीन चौकोर कोड एंड उपपकड कम करने में प्रभावकारी है। 135 मि मी चौकोर मेश कोड एंड सबसे प्रभावकारी है। इसे सबसे प्रभावी रूप में समाविष्ट किया जा सकता है।

कंटिया से मत्स्यन

पी. जोर्ज मथाई

मत्स्यन में गिल नेटिंग, लोंग लाइनिंग आदि परंपरागत और पर्स सीनिंग जैसे आधुनिक तरीकों का प्रमुख रूप से इस्तेमाल होता है। इसमें चूडों का उपयोग बहुत ही सरल और आसान होता है। कंटिया मत्स्यन सबसे पुराना तरीका है। मत्स्यन के क्षेत्र में बहुत ही प्रगति शील तथा आधुनिक तरीकों के प्रचार के होते हुए भी कंटिया का उपयोग आज भी नकारा नहीं जा सकता। आंकड़ों से पता चलता है कि कुल मत्स्यन का 12% कंटिया द्वारा ही होता है।

कंटिया का उपयोग सरल है। यही नहीं कि बोट और नाव को इसके लिए सुसज्जित करने के लिए जो खर्चा होता है वह अन्य तरीकों की तुलना में कम है। जाल द्वारा किये जाने वाले मत्स्यन की तुलना में कंटिया द्वारा मत्स्यन ज्यादा सफल है। इसके ज़रिए। बड़ी और तेज मछली को आकर्षित कर उसे पकडा जा सकता है। सागर की गहराईयों में मछलियों का वास है। ऐसी जगहों पर ट्राल जाल जैसे जालों का उपयोग नहीं किया जा सकता। अनुरूप कंटिया के उपयोग से ऐसी जगहों पर अच्छा मत्स्यन किया जा सकता है।

कंटिया बनाने के लिए स्टील तार का उपयोग होता है। कंटिया में फँसी मछली निकलने की कोशिश करने पर कंटिया टूट सकती है, टेढ़ा हो सकती है। इससे बचने के लिए कंटिया को तैयार किया जाता है। भिन्न आकार की और भिन्न तरह की कंटिया उपलब्ध हैं। छोटी मछली के लिए छोटी कंटिया और बडी मछली के लिए बडी कंटिया का उपयोग किया जा सकता है। कंटिया को चुनते समय मछली का आकार ही नहीं, मछली का मुँह, मुँह की लंबाई पर भी ध्यान देना जरूरी है।

कंटिया द्वारा किए मत्स्यन में चारा महत्वपूर्ण कारक है। प्रत्येक मछली का आकार ही उसके चारे के रूप में फायदेमंद होता है। कसाई खाने की रद्दी मांस आदि से बने कृत्रिम आहार भी उपलब्ध है। बहुत रफ़्तारवाले और चारे को शीघ्र ही दबोचनेवाली मछलियों को जिंदा चारा ही फायदेमंद होता है। लेकिन इनको इकटठा करना मुशिकल और खर्चीला होता है। मछली चारे को भिन्न तरीकों से खाता है। कुछ अवसर पर खासकर अंडा देने के बाद कुछ मछलियाँ चारा नहीं लेतीं। ऐसे में कंटिया से मत्स्यन करने से भी कोई फायदा नहीं है।

रेशे को जोर से लपेटकर उसमें दाग और पेस्ट लगाकर बनी रस्सी को कंटिया में इस्तेमाल किया जाता है। पोली एथिलीन, मोनोफिलमेंट आदि सिंथटिक रस्सियों का उपयोग बाजार में हो रहा है। मछली के हिसाब से रस्सी को चुना जाना चाहिए।

हल्की से कंटिया में चारा लगाकर पानी में उतारा जाता है। चारा खाते वक्त मछली के गले में कंटी अटक जाती है और मछली को पकडा जा सकता है। चारा लगायी गयी कंटी, खासकर यदि जिंदा चारा लगायी गयी हो तो, पास की मछलियों को आकर्षित कर पकडे जाने के कारण उसका मत्स्यन विस्तार ज्यादा होता है। दूसरे जालों से बच निकलने की कोशिश में मछली कंटिया की ओर आकर्षित हो जाती है।

कंटिया द्वारा किए जानेवाला मत्स्यन

मत्स्यन रोड

हल्के लाइन तथा मोटे लाईन के एक अग्र दंड को दूसरी अग्र कंटिया में बाँधा जाता है। चारा लगाने के बाद कंटिया पानी में उतारी जाती है। उस पर फ्लोट रखा जाता है। फ्लोट के हिलने से पता चलता है कि मछ्ली चारा को खाने लगी है। तब कंटिया को खींचा जाता है तथा उसमे फँसी मछली को निकाला जाता है। छोटा कुँआ, तालाब और बड़े-बड़े तालाबों में इस तरीके से मत्स्यन किया जा सकता है। गरीब लोगों को यह पैसा कमाने का एक तरीका है और मनोरंजन भी प्रदान करता है।

हैंडलाईन

लंबे लाइन के अग्र भाग को कंटिया में बाँधा जाता है। इसमें भी एक छोटा सा भार लटका जाता है। लाईन का दूसरा अग्र एक रील में बाँधकर हाथ में रखा जाता है। लाईन के हिलने से पता चलता है कि कंटिया में मछली छूने लगी है। यह सरल तरीका है और पैसा कमाने का एक मार्ग है। इसमें खर्चा नहीं के बराबर है।

समुद्री पुल से, सागरतट के चट्टानों से, छोटे नावों से इस प्रकार का मत्स्यन किया जा सकता है।

कलवा हैंड लाइन

यह बहुत ही सरल और कम खर्चीला तरीका है। 1.5 से 2.0 मि मी तक मोटे मोनो फिलमेंट को मुख्य लाइन के रूप में उपयोग किया जा सकता है। इसके साथ 5 से 8 शाखाएँ होती हैं। यह शाखाएँ 3-4 सेंटीमीटर लंबाई में 50 सेंटीमीटर चौडाई की दूरी पर होती है। शाखाओं में कंटिया लगायी जाती है। शाखाओं के पूर्वी भाग पर 2-3 कि ग्राम भार बाँधा जाता

है। अग्र का भार लाईन के सामने खडा करते हैं और बहाव में लंबाई सा रह जाता है। चारा लगाकर कंटिया पानी में उतारी जाती है। लैन हिलने से समझ में आता है कि मछली चारा खाने लगी है और लाईन को खींचा जाता है। मछली को कंटिया से अलग करके फिर से मत्स्यन किया जा सकता है। पोत के पार्श्व में रोलर लगाया जा सकता है जो हाथ से इस्तेमाल किया जा सकता है।

पोल व लाईन

यह चूरा किस्म की मछलियों को पकडने के लिए लक्षद्वीप में प्रयुक्त खास प्रकार की कंटिया है 13 मीटर लंबे व अग्र भाग में 50 मि मी मोटे बांस पर कंटिया को लगाया जाता है। बाँस के बदले में अब फैबर रीइनफोर्सड प्लास्टिक खंभा उपलब्ध है। यह कंटिया आकार व रूप में अलग है। चारे के रूप में छोटी-छोटी जिंदा मछलि का उपयोग होता है। जिंदा मछलियों से भरी नावों से इस प्रकार का मत्स्यन किया जा सकता है। चारे को पानी में फेंककर मछली को आकर्षित किया जाता है। इन छोटी मछलियों के बीच से कंटिया द्वारा मछली को पकडा जाता है। इस तरीके के मत्स्यन में बहुत अनुभव की जरूरत है।

ट्राल लाईन

पोत के पिछले भाग में उलटी दिशा में दो बाँस बाँधे जाते हैं। इसमें लाईन लगाया जाता है। लाइन के एक भाग को स्वीलर से बाँधा जाता है। स्टील वायर को मरोडकर बने भाग के साथ कंटिया भी लगायी जाती है। आमतौर पर दो साधारण कंटिया को जोडकर एक कंटिया बनायी जाती है। कंटिया को इस आकार में बनाया जाता है कि वह चारा के समान लगे। इसे धातु व प्लास्टिक के साथ जोडा जाता है। कंटिया को पानी में डालकर बोट को तेजी से चलाया जाता है और कंटिया पानी के ऊपर ही दिखाई देता है। मछली इसे चारा समझकर खाने की कोशिश करती हैं और पकडी जाती है। कंटिया में फँसी मछली पकडने के लिए बोट की रफतार कम करके लाईन को खींचा जाता है। इस प्रकार के मत्स्यन में लंबी और ज्यादा दाम वाली मछली पकडी जाती है।

लोंग लाईन

शार्क, एटा, सीर, ट्यूणा आदि मछलियों को पकडने के लिए आयिरम कंटिया अथवा लोंग लाइन मत्स्यन का उपयोग किया जाता है। मुख्य लाइन के रूप में 6 मिली मीटर मोटाई की रस्सी का उपयोग करता है। मुख्य लाईन में दूरी में शाखाओं के अग्र में कंटिया को बाँधा जाता है। शाखा को प्रमुख लाइन से जोडने से पहले कभी सीवन का उपयोग किया जाता है। शाखाओं का उपयोग करते समय पानी के उपर ज्यादा लंबाई और नीचे उपयोग करने पर लंबाई कम

दिखती है। लंबी शाखाओं में कंटिया के पास के भाग को स्टील वायर से जोडा जाता है। शाखाओं के बीच की दूरी दो शाखाओं की कुल दूरी से ज्यादा होती है। कंटिया को चुनते समय मछली के आकार के अलावा मछली के मुँह के आकार पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

अब धागे के बदले नाइलोन रस्सी और पोली एथिलीन रस्सी का उपयोग होता है। इसके अलावा नाईलोन मोनोफिलेमेंट का भी उपयोग होता है। कहीं-कहीं स्टील वयर से बनी चीज का उपयोग होता है। प्रमुख लाइन में शाखा के दोनों तरफ कुछ भाग स्टील वायर लगाकर भी उपयोग किया जाता है। पोत की लंबाई, मजदूरों की संख्या के आधार पर मत्स्यन के लिए लाईन की लंबाई व कंटिया की सख्या का निर्णय किया जाता है। ट्यूणा आदि मछलियों को पानी की सतह पर, शार्क मछलियों को निचले तट पर और सीर आदि मछली के बीच में लोंग लाईन का उपयोग होता है। समुद्र के निचले तट पर स्थिर रूप में या बहाव के साथ चलानेवाले तरीके में भी लाईन का उपयोग किया जाता है। मत्स्यन के लिए जाने से पहले मुख्य लाईन व शाखा आदि जरूरी चीजों को सजाकर रखना चाहिए। निश्चित जगह पहुँचकर, हवा, बहाव, गहराई आदि का निरीक्षण करके लाईन को पानी में उतारा जा सकता है। एक अग्र से मुख्य लाईन व शाखाओं को पानी में उतारा जाता है। शाखा को छोडने से पहले कंटिया में चारा लगाया जाता है। पूरे लाईन को पानी में उतारने के बाद एक अग्र लंबी रस्सी से पोत को बाँधा जाता है। जरूरत के अनुसार फ्लोट व सिंकर बाँधकर निश्चित जगह पर लाईन को खडा किया जाता है। लाईन की जगह जानने के लिए पोत से दूर अग्र भाग में और बीच में झंडा लगाया जाता है। रात में झंडों के साथ बत्तियाँ का भी उपयोग होता है। इसके अलावा बडे फलोट भी डाले जाते हैं जो पानी के ऊपर दिखाई पड़ते हैं। साधारण तौर पर लोंग लाईन-मत्स्यन रात में होता है। लाईन उठाने का समय आ गया तो एक छोर से लाइन को उठाया जाता है। कंटिया में फँसे मत्स्य को अलग किया जाता है और लाईन को क्रम में रखा जाता है। आंकडों से पता चया है कि कुल पकड में 1.7% पकड लोंग लाईन मत्स्यन द्वारा होती है।

गहरे समुद्र में जहाजों से लोंग लाइन द्वारा वाणिज्यपरक रूप में ट्यूणा मछली को पकडा जाता है। यह पूरी तरह से यंत्रीकृत होता है। कंटिया के द्वारा किए जानेवाले मत्स्यन कम खर्चीला होता है। यही नहीं यह प्रकृति के अनुकूल है और इसमें मछलियों के वंश का नाश नहीं होता है। इस प्रकार का मत्स्यन लाभदायक है। ऐसे में कंटिया मत्स्यन को व्यापक रूप से प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

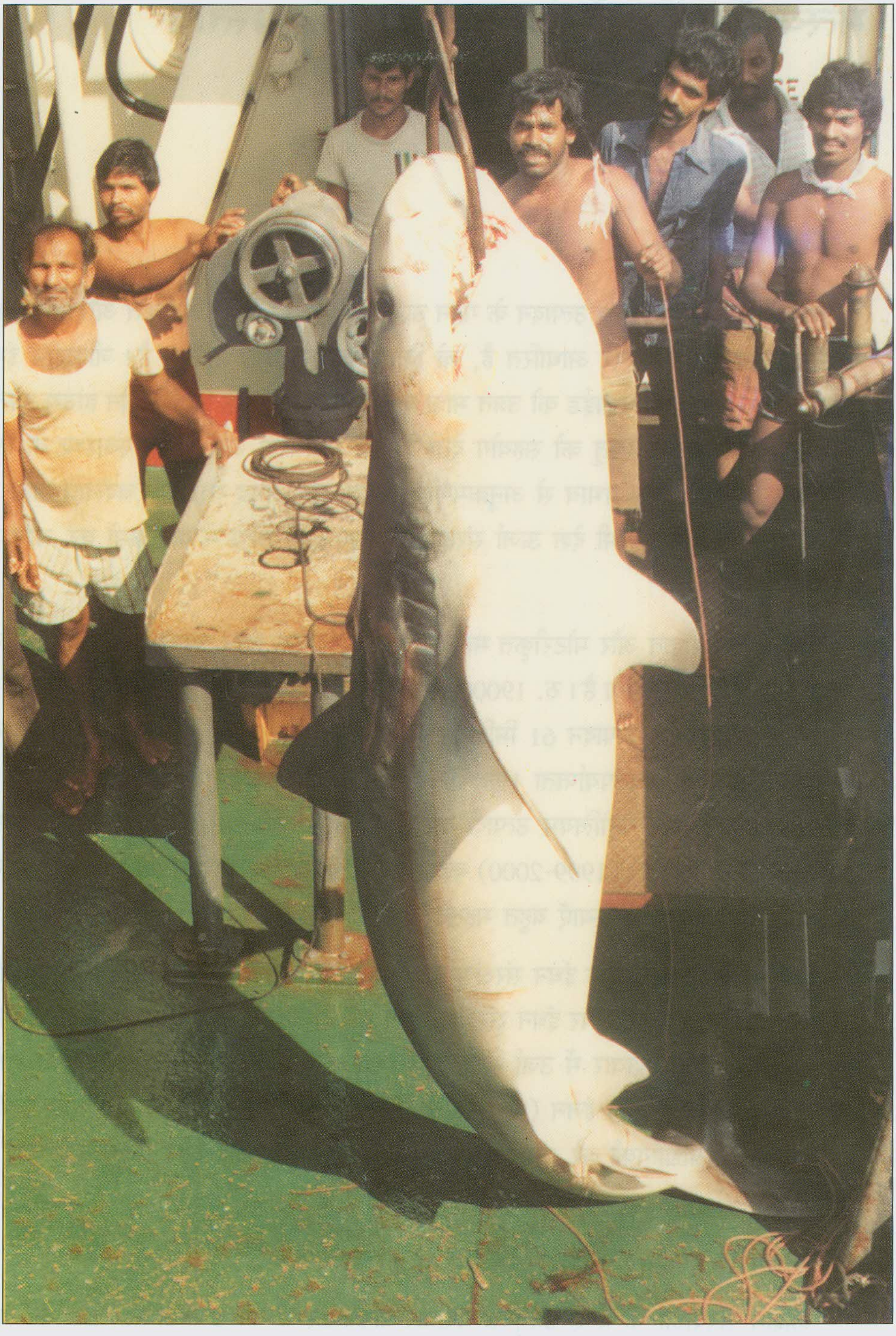

कंटिया द्वारा पकडे गए शार्क को यान के अन्तर घसीटा जा रहा है।

मत्स्य पैदावार में इंधन संरक्षण के प्रस्ताव

एम.आर. भूपेंद्रनाथ

आधुनिक मत्स्यन, खाद्य उत्पादन के गहन ऊर्जा तरीकों में एक है। यंत्रीकृत और मोटरीकृत मत्स्यन, जीवाश्मी इंधन पर आधारित है, जो कि अनवीकृत और सीमित है। जीवाशम इंधन वातावरण में कार्बनडायोक्साईड की उन्नत मात्रा का उत्पादन करता है जो कि ग्रीन हाउस इफेक्ट को और अन्य प्रदूषित वस्तु को सहयोग देता ह। यह पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य के लिए अहितकर है। ग्रीन हाउस प्रभाव से अनुक्रमणीय मौसम और समुद्र वैज्ञानिक बदलाव होता है। इन उलझनों के कारण सभी देश ऊर्जा संरक्षण के लिए बडी मात्रा में कार्यक्रमों का आयोजन कर रहे हैं।

भारत का यंत्रीकृत और मोटरीकृत मत्स्यन यान के वार्षिक इंधन खपत को 1219 मिलियन लिटर आकलित किया गया है। रु. 190000 मिलियन खर्च पर। 1997-98 के दौरान भारत का पेट्रोलियम उत्पादों का उत्पादन 61 मिलियन और औसत खपत 80 मिलियन था। पेट्रोलियम उत्पादों में भारत की स्वयंपर्याप्तता 1985-86 में 60% थी जबकि 1997-98 में यह 34% ही रही। कच्चा तेल और पेट्रोलियम उत्पादों का ऊर्जा निर्यात बिल 10 बिलियन यू एस डालर आकलित किया गया है। (1999-2000) बढती मांग, आपूर्ती गैप और नियति पर तीव्र निर्भरता के कारण उर्जा सुरक्षा समस्याएँ बहुत महत्वपूर्ण माना गया है।

इसलिए यह स्पष्ट है कि इंधन संरक्षण का अप्रलम्बित तरीका, कम प्राप्यता और पर्यावरण पर इसके प्रभाव के आधार पर इंधन संरक्षण पहल को विकासोन्मुख प्रयासों में प्रमुख स्थान ले लेना चाहिए। मत्स्य पैदावार में उर्जा संरक्षण के भिन्न प्रस्ताव। (i) मत्स्यन गिअर और तरीके (ii) यान प्रौद्योगिकी (iii) इंजन (iv) कटौती गिअर, नोदक, टोंटी (v) यात्रा आधारित नोदन (vi) आधुनिक प्रौद्योगिकी को अपनाना (vii) संपदाओं का संरक्षण और संवृद्धि की चर्चा की गयी है।

1. मत्स्यन गिअर और तरीके

लक्षित संपदाओं के लिए उपयुक्त पैदावार प्रौद्योगिकियों की उर्जा-क्षमता-घोल का चयन और परिनियोजन उर्जा संरक्षण का प्रमुख विकल्प है। भिन्न मत्स्यन गिअरों में उर्जा उपयोग में

बहुत फर्क दिखाई पडता है। गुलब्रांडसन (1986) के अनुसार एक किलोग्राम मछली पकडने केलिए ट्रालिंग में 0.8 किलोग्राम इंधन और पर्स सीनिंग के लिए 0.07 कि ग्राम इंधन, लोंग लाईनिंग और गिल नेटिंग के लिए 0.15 और 0.25 कि ग्राम इंधन की जरूरत है। मानव निर्मित जाल सामग्रीयों से मत्स्यन गिअर की पकड शक्ति और इंधन क्षमता में वृद्धि आई है। उन्नत मात्रा पर्स सीनिंग जैसे उर्जा संरक्षण मत्स्यन प्रयोग, सिंथेटिक नेटिंग सामग्रीयों से ही यह संभव हुआ।

ट्रालिंग सबसे ज्यादा उर्जा ग्रहण मत्स्यन प्रक्रिया है। लोंग लाइनिंग और गिल नेटिंग जैसे निष्क्रिय मत्स्यन तरीके की तुलना में यह 5 गुना ज्यादा इंधन खपत करता है और पर्स सीनिंग की तुलना में 11 गुना ज्यादा इंधन खपत करता है, एक किलोग्राम मत्स्य उत्पादन के लिए। ट्रालरों के संचलनात्मक व्यय का इंधन दाम का प्रतिशत अधिष्ठापित इंधन शक्ति और यात्रा के आधार पर 45 से 75% के बीच में बदलता है। इसलिए इंधन संरक्षण का अधिकतर क्षमता ट्रालिंग में विद्यमान है। ट्रालिंग में ज्यादा समय गिअर के कर्षण के लिए लगा जाता है। कर्षण के समय गिअर के प्रतिरोध की तुलना में यान का भारी प्रभाव है। एक मत्स्यन यात्रा के कुल खर्च में इंधन खर्च 50 प्रतिशत हो सकता है।

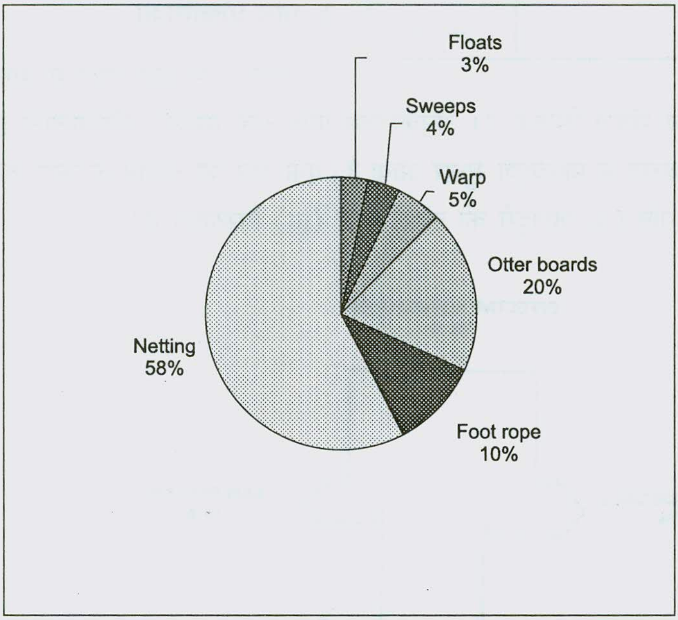

Fig. 1 Drag of trawl gear components (after Wileman, 1984)

अभिकल्पना और रिगर की सक्रिय अवस्था के आधार पर ट्राल गिअर संघटकों के खींच में फर्क होता है। वाइलन (1984) ने नोरडिकट्राल डिजाइनों के लिए प्ररूपी मूल्यों का एक सेट दिया गया। जिसमें कुल खींच में ताना 5 प्रतिशत, प्रसर्प 4 प्रतिशत, उद्रपट 20 प्रतिशत, प्लव 3 प्रतिशत फूटरोप 10 प्रतिशत और जाली लगना 58 प्रतिशत है। (चित्र- 1)

नोरडिक ट्राल डिजाइनों के विस्तार से नमूना जाँचा और फील्ड अध्ययन के बाद अनुसंधान

सारणी 1. ट्राल मत्स्यन में इंधन बचत के तरीके

इंधन क्षमता के	कुलखींच की कटौती का प्रतिशत
गॉठहीन जाली लगाने का उपयोग	7
हल्के डोरा का उपयोग	7
बडे मेश का उपयोग	7
उभारे उद्र पट का उपयोग	4
उद्र पट पर अनुकूलतम कोण का हमला	4
झिरीदार उद्र पट का उपयोग	2
कई रिंग ट्रालिंग का उपयोग	25-30
जोडी ट्रालिंग का उपयोग	30-35

कार्यकताओं ने ट्राल पद्धति में खींच को कम करने के साधनों का सुझाव दिया है। (वाइमैन, 1984, द ओइल फिश प्रोजेक्ट-नोडफोरस्क, 1981-84 (टेबुल-1)। झींगा ट्रालिंग में डबल रिग पद्धति, बडे मेश का उपयोग, हल्का टवाईन और डोर एंगत अडजेस्टमेंट का उपयोग साधारण मत्स्यन में आगे है। गिअर जो कि आर्थिक कर्षण शक्ति से मेल नहीं खाता है। इससे उर्जा की हानि होती है।

2. पोत प्रौद्योगिकी

चित्र 2 में छोटे ट्राल में ड्राग न करने पर उर्जा-कमी का संकेत मिलता है। अनुकूलतम पोत और मशीनी अभिकल्पना द्वारा इंधन के संचलनात्मक बचत में महत्वपूर्ण सुधार आया है। एक यान को चलाने के लिए जरूरी शक्ति में मुख्यत: (i) गति (ii) जलदूरी की लंबाई और (iii) विस्थापन है।

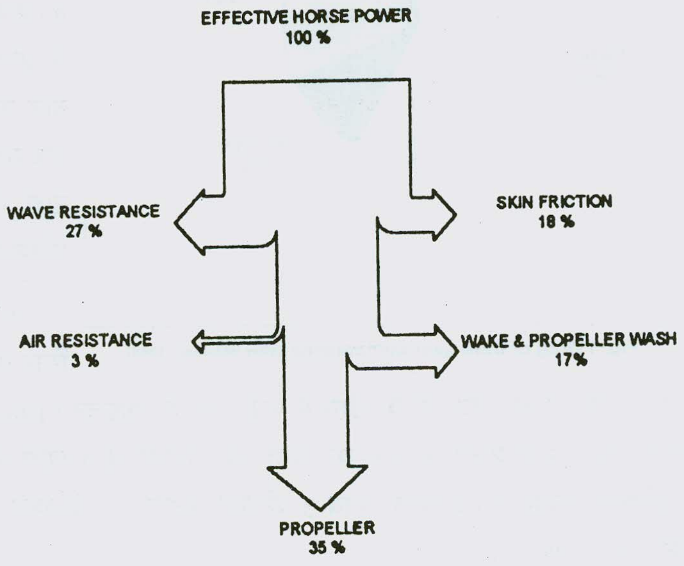

चित्र - 2 - छोटे ट्रालर में ऊर्जा घाटा

2.1 आर्थिक पोत गति

पोत के इंधन खपत को प्रभावित करनेवाली सबसे महत्वपूर्ण उपादान यान की गति है। लहर तोड प्रतिरोध में वृद्धि के कारण जैसे पोत अधिकतम गति लेती है। ईंधन खपत तब प्रबल है। यह गया है कि 10-20% गति की कटौती केलिए 35 से 61% इंधन की बचत हो सकती है। (ओइल फिश प्रोजेक्ट - नोरडफोस्सक), 1981-84, गुलबांडसन, 1980, एजीसन एंड एंडाल, 1993 डी एफ ओ, 1983) ईंधन बचत प्रयोगों में सबसे महत्वपूर्ण तरीका आर्थिक यान

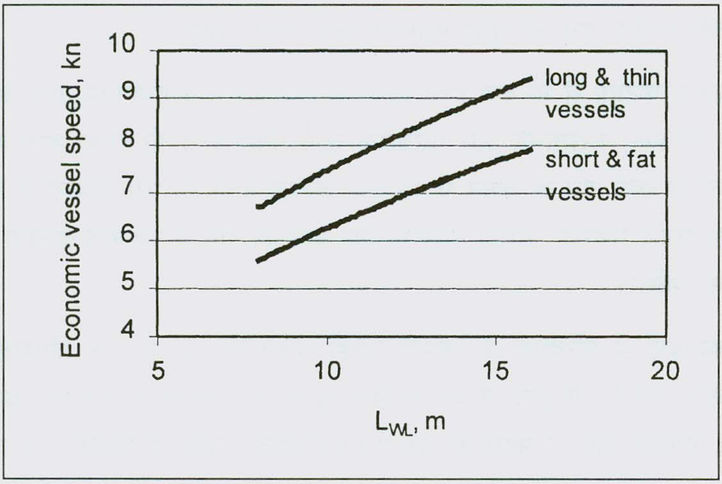

चित्र - 3 भिन्न लंबाई के यानों की आकलित आर्थिक पोत गति

की गति है। संचालन गति का चुनाव, खासकर मत्स्यन मैदान की ओर और वापसी यात्रा की गति को साधारणतः यान के स्किपर के नियंत्रण में होता है। चित्र - 3 में भिन्न किस्म के यान की आर्थिक यान गति का आकलन दिया गया है।

2.2 हल डिजाईन, विस्थापन और रखरखाव

शक्ति की जरूरतों में कटौती निम्नलिखित तरीकों से प्राप्त की जा सकती है। (i) पानी लाइन की लंबाई को बढाकर (LWL); (ii) अभिकल्पना चरण मे जहाँ संभव वहाँ विस्थापन को कम करके और (iii) हल फाउलिंग को नियंत्रित करने के लिए उचित कार्रवाई।

साधारण किफायती गति के लिए यान की गति (कि मी) और यान की लंबाई (फूट) का अनुपात एकत्व के निकट है।

पानी लकीर की लंबाई बढाकर अन्य आयामों को वैसे ही रखकर हल प्रतिरोध को कम कर

गति में तेजी लायी जा सकती है। इस दौरान यान का भार बढ़ जाता है और हल प्रतिरोध पर कुल प्रभाव ज्यादातर हितकारी होता है। इंधन बचत के फायदे के विरुद्ध निर्माण दाम की वृद्धि को संतुलित बनाए रखना चाहिए। नोरवे, डेन्मार्क और भारत ने नुकीले या गोल धनुष द्वारा और लंबी पानी लकीर से विद्यमान यान में परिवर्तन से हल प्रतिरोध से 15 से 20% कटौती का संकेत दिया है। यह रिपोर्ट किया गया कि एकल हल मत्स्यन यान की तुलना में काटामरान मत्स्य यान जैसे बहु हल यान में शक्ति अनुपात की तुलना में उन्नत गति, इंधन बचत शक्ति और ज्यादा विस्तार डेक, ब्रिडज और ज्यादा वास का क्षेत्र है। इस प्रकार की नूतन अभिकल्पनाओं के फायदे और मशीनी दाम की वृद्धि संतुलित किया जाना चाहिए।

विस्थापन में कटौती से भी कम इंधन खपत हो सकता है। अलूमिनियम, एफ आर पी और प्लाईवुड से बने हल, फेरोसीमेंट और पारंपरिक काष्ठ निर्माण से भी हल्का होता है। इंधन में 23% कटौती से छोटे यान के वजन में 12.5% कटौती होती है। ऐसे मामलों में इंधन बचत किफायत के विरुद्ध स्थिरता, समुद्री उदारता और यान का दाम में संभवित कटौती में संतुलन बनाया रखना चाहिए।

उष्ण कटिबंधों में परिदूषण के कारण सतही घर्षण में 0.6 से 1.5 प्रतिशत वृद्धि का आकलन किया गया है। परिदूषण के कारण इंधन खपत पहले महीने के अंत में 7 प्रतिशत, छठे महीने में 44 प्रतिशत और 12 महीने के अंत में 88 प्रतिशत में वृद्धि हो सकती है। (गलब्रांडसन) अतः नियमित रूप से हल को साफ करने और ऐंटी फाउलिंग पेंट के उपयोग से इंधन में भारी बचत की जा सकती है।

3. इंजन

टरबो - चारजिंग (1965 से चालू) और नया सामग्री विकास उन्नत उत्पादन और गुणता नियंत्रण पद्धति और कंप्यूटरीकृत डिजाइन तकनीक जैसे खास प्रौद्योगिकी सुधार के परिचय से डीजल इंजनों के खास ईंजन खपत 1945 में 175 ग्राम $hp^{-1} h^{-1}$ से 1995 में 135 ग्राम $hp^{-1} h^{-1}$ से कम हो गया।

3.1 इंजनों का चुनाव

छोटे मत्स्यन बोटों में दो तरह के इंजनों का उपयोग होता है (1) आउट बोर्ड पेट्रोल/और या मिट्टी के तेल वाला ईंजन और (2) इन बोर्ड डीजल ईंजन। टू स्ट्रोकवाले आउट बोर्ड ईंजनों से उन्नत ईंधन खपत होता है। डीजल इन बोर्डो में 0.25 $1hp^{-1} h^{-1}$ की तुलना में खास ईंधन खपत 0.5-0.6 $1hp^{-1} h^{-1}$ है। (चित्र 4) उन्नत प्रोपल्लर गति और अनुवर्ती कम प्रोपल्लर कुशलता आउट बोर्ड की एक असुविधा है। निम्न दाम और सुवाह्यता इसकी सुविधा है।

साधारण ऐसपिरेटेड ईंजन से टरबो चार्जड डीजल इंजन 15% ज्यादा ईधन क्षमतावाले हैं। छोटी पैमाने मत्स्य में पेट्रोल 4 स्ट्रोकआउट बोर्ड इंजन का परिचय किया जाता है जिसमें ज्यादा ईधन किफायती और उत्सर्जन स्तर है। यह रिपोर्ट किया गया कि सीधा ईधेन इंजेक्शनवाले पेट्रोल पेट्रोल आउट बोर्ड इंजन में ज्यादा ईधन क्षमता है, इसे छोटे पैमाने मत्स्यन में परिचय किए जाने की प्रत्याशा है।

3.2 संचालित आर पी एम इंजनों की रेंज

इंजन के ज्यादा लगातार रेटिंग के 80 प्रतिशत सर्वीस स्पीड में आधुनिक समुद्री डीजल इंजन ज्यादा किफायती रूप में चलेगी। प्रोपल्लर कम करने से आर पी एम में 30% इंधन खपत कम होता है।

3.3 अधिष्ठापित इंजन शक्ति के सही आकार करने से छोटे इंजनों से बहुत फायदें होते हैं। निम्न निवेश खर्च, से कम रखरखाव और इंधन खपत में भारी कटौती। ऊर्जा के हिसाव से यान को ज़्यादा शक्तियुक्त करना फायदेमंद नहीं है क्योंकि यान का अधिकतम प्राप्त गति जल रेखा की लंबाई पर आधारित है। गिल जाल और लाईनिंग के निष्क्रिय मत्स्यन तरीकों में कार्यरत छोटे मत्स्यन यान का अधिष्ठापित ईंजन शक्ति 5.6 प्रति टन विस्थापन से ज्यादा न हों, जिसमें कटिबंधी अवस्था में 10% वृद्धि है। आउट बोर्ड इंजनों के मामले में यह 7.5 से 9 hp प्रति टन विस्थापन होता है।

3.4 इंजन अनुरक्षण:

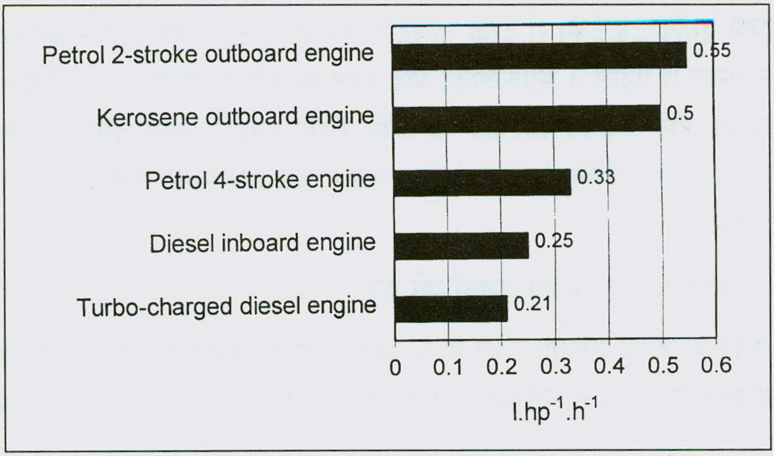

चित्र - 4 इंजनों का प्ररूपी विशिष्ट इंधन खपत दर

आधारित है, यहाँ एक अनुकूलतम नोदक व्यास और पिच का उपयोग हुआ है। यदि कम आर पी एम के बड़े नोदक जो कम खास इंधन खपत आर पी एम को खींचने के लिए मेल खाता है जिससे काफी इंधन बचत संभव है। तेल मत्स्य परियोजना (नोरडफोरसक) जाँच से यह संकेत मिलता है कि नोदक आकार की वृद्धि से ईधन खपत के 20-30 प्रतिशत कटौती होती है।

नोदक नोज़िल का समावेशन और नोज़िल का सुधरित डिजाईन से भी खपत दर में कटौती होगी। (नोरडफोरसक) तेल मत्स्य परियोजना अध्ययन से यह पता चला है कि नोज़िल नोदक के उपयोग से 6 नोट से भी कम गति में 20-30 प्रतिशत शक्ति हो सकती है जबकि इसका प्रभाव उच्च गति में कम हो। 6 नोट से भी कम गति में संचालन करनेवाले मत्स्यन गिअर का कुल इंधन बचत 10-14 प्रतिशत तक हो सकता है।

5. सेल सहायक नोदन

भारत, श्रीलंका और इंडोनेशिया में छोटे मत्स्यन यान और काटामरान में सेल के उपयोग करने की एक लंबी परंपरा है। यदि सेल को मुख्य नोदन के रूप में उपयोग किया जाता है जहाँ, वह अपनाए गए मत्स्यन तरीके के लिए उचित है, तो इंजन के आकार को कम किया जा सकता है जिससे पोत और मत्स्यन मैदान में शीघ्र गति मिलती है। तटीय गिल नेटिंग और लोंग लाईनिंग जैसे निम्न उर्जा मत्स्यन तरीकों में यह एक व्यावहारिक वैकल्पिक उर्जा स्रोत है। मत्स्यन यान में उपयोग की जानेवाली पारंपरिक सेल पद्धतियाँ हैं - स्पिरिट सेल, लेटिन सेल, चैनिस सेल और बरमुडा सेल। हवा चालित नोदन के प्रस्ताव हैं, एरोफोयिल्स, मेगनस रोटर उपकरण आदि जो कि अब भी परीक्षणात्मक अवस्था में है।

6. विकसित प्रौद्योगिकी को अपनाना

प्रौद्योगिकी में हई आधुनिक विकास से मछुआरों के उपकरण से संभाव्य मत्स्यन तल तक सीधे पहुँचने, (ग्लोबल पोशिजनिंग सिस्टम) मत्स्य को ढूँढने और पकड प्रक्रिया की सफलता को ध्वनिक रूप में निरीक्षण करने (इको साउंडर, सोनार, गिअर, मानीटरिंग सिस्टम) जिस से मत्स्यन समय में बचत होती है और ऊर्जा की बचत संभव है।

सैटलाईट आधारित रिमोट सेनसिंग तकनीक की प्रगति से समुद्र सतह ताप और समुद्री रंग से ज्यादा मत्स्य के क्षेत्र को पहचाना जा सकता है जिससे खोज के समय मे कमी आती है और सही समय की जानकारी मछुआरों को दी जाती है।

मत्स्य आधारित जियोग्राफिकल इन्फरमेशन सिस्टम से सही निर्णय मत्स्य समूह के विशेष संबंधों का हाइड्रोग्राफिक और बैथीमेट्रिक पैरामीटर्स खास लक्षित संपदा के लिए मत्स्यन तल का सही चुनाव हो सकता है।

दुनिया के भिन्न भागों में मत्स्यन समुच्चयित उपकरण ने इंधन बचाने की पर्स सीनिंग में, हैंड लाइनिंग में और गिल नेटिंग में संभाव्यता दिखाई है।

ओन बोर्ड मत्स्यन यानों में इंधन फ्लो मानीटर और यान विश्लेषण कम्प्यूटरिंग पद्धति के अधिष्ठापन से सुधरित संचालन क्षमता और ऊर्जा इष्टतमकारी संभव है। उत्तरदायी मात्स्यकी का आचरण-संहिता है कि ओन बोर्ड पर इस प्रकार के उपकरणों के उपयोग को बढावा देने का सिफारिश करें।

इष्टतम यान प्रबन्धन से ऊर्जा संरक्षित होती है। दैनिक मत्स्यन के बदले बहुदिवसीय मत्स्यन, मदर शिप और कैंसर बोट संचालन जहाँ भी प्रायोगिक हों, यान संचालन में इंधन बचत प्रयोग हैं।

7. मात्स्यकी संपदा का संरक्षण और वृद्धि

ज्यादातर मत्स्यन संचय लगातार मत्स्यन दबाव के अधीन है जिससे वृद्धि की कई अवस्थाओं और लाभदायक मत्स्यन पर प्रभाव पड़ता है। इस से पारंपरिक संपदा से प्राप्त लाभ का ह्रास होता है साथ ही प्रत्येक यूनिट पकड़ में प्राप्त मत्स्य के औसत आकार भी कम होती है। मत्स्य प्रग्रहण में इंधन संरक्षण की समस्या का दीर्घकालीन उपाय है - उत्तरदायी मत्स्यन व्यवहार के ज़रिए तटीय मात्स्यिकी संपदा का पुनःस्थापन और बढोत्तरी, मत्स्यन यान समूह के अतिरिक्त क्षमता की कटौती और संपदा संरक्षण का कार्यान्वयन व बढोत्तरी योजनाएं।

मत्स्य का जैव रसायन

डॉ. के. देवदासन

कई कारणों से मत्स्य उच्च-गुणता का खाद्य पदार्थ माना जाता है। पाक-खाद्य गुण के अलावा खाद्य वस्तु के रूप में उसका महत्व बढ़ा है। मत्स्य कम खर्चीला और उच्च गुण प्रोटीन का स्रोत है। बेल या चर्बी जैसे मत्स्य के अन्य घटकों के भी खास पोषकीय गुण हैं। इस कारण से आहार के रूप में मत्स्य ज्यादा स्वीकृत हो रहा है, खासकर उन लोगों के बीच जो "स्वास्थ्य आहार" के प्रति जागरूक है।

किसी भी आहार के गुण का निर्धारण उसके घटकों के द्वारा होता है। मत्स्य के मामले में भी यह सही है। जीवरासायनिकों की नज़र में जल, प्रोटीन, लिपिड (चर्बी तेल) धातु, कारबोहाईड्रेट और विटामिन मत्स्य के मुख्य घटक हैं। इनमें खाने योग्य भाग 98% है जो जल, प्रोटीन, लिपिड और खनिज से बनता है। इसे आमतौर पर मत्स्य का "निकटतम संयोजन" कहा जाता है।

पोषक-कारक और खाद्य विशेषज्ञ के लिए मत्स्य के निकटतम संयोजन की पूरी जानकारी महत्वपूर्ण होती है। जैवरासायनिक घटकों के गुण और मात्रा की सूचना के आधार पर मत्स्य के पौष्टिक गुण का निर्धारण किया जा सकता है। मत्स्य के संसाधन और परिरक्षण के लिए जीवरासयनिक संयोजन के आंकड़े महत्वपूर्ण हैं। मत्स्य जल्दी खराब होनेवाली वस्तु है और उसके गुण की कमी का मुख्य कारण प्रोटीन और लिपिड के बदलाव से होता है। इसलिए मत्स्य के संसाधन और संचयन के समय मत्स्य के गुण में होनेवाले बदलाव को समझने के लिए मत्स्य के संयोजन की सही जानकारी ज़रूरी है। जाति, आकार, लिंग, मौसम, खाद्य आदत, पौष्टिक स्तर, अण्डजनन स्थिति आदि पहलुओं का मत्स्य के जीवरासायनिक संयोजन पर प्रभाव पड़ता है। इन सभी पहलुओं से संयोजन में बदलाव आ सकता है, जिसमें पौष्टिक गुण और संसाधन गुणों में बदलाव नज़र आता है। संयोजन पहलुओं के सही और विश्वसनीय आंकड़ों का, सभी परिवर्तनशील स्वभावों को ध्यान में रखकर, इकट्ठा करना बहुत महत्वपूर्ण है। लेकिन अक्सर इस महत्व को सही रूप में समझा नहीं जाता और जीवरासायनिक संयोजन के आंकडों को इकट्ठा करते समय उसे सिर्फ नेमी तकनीकी काम के रूप में देखा जाता है जबकि अनुसंधान के लिए मूल आंकड़ा इकट्ठा करने के काम को महत्व दिया जाना चाहिए। यह गलत तरीका है और वैज्ञानिकों को मूल आंकड़ों के महत्व को जान लेना चाहिए।

यद्यपि निकटतम संयोजन के आंकडे कई प्रयोगों के लिए विवेचनात्मक है और 1880 से इन्हीं चीज़ों पर खोज की जा रही हैं। फिर भी कई जाति के मत्स्यों के निकटतम संयोजन के लिए विश्वसनीय आंकडे प्राप्त करना मुश्किल है। मत्स्य खास समूह के विषमजातीय प्राणी है जो रासायनिक अनुकूलन और क्रम विकास से विकसित हैं। इनकी 24000 जातियाँ हैं और परिमाण, आकार और बाह्याकृति में अधिकतम परिवर्तन दिखाई देते हैं। ताप, लवणता, आहार की उपलब्धता आदि परिवर्ती पर्यावरणीय अवस्था मत्स्य के रासायनिक संयोजन में गहरा असर डालते हैं। स्वच्छ पानी, खारापानी, समुद्री और गहरे समुद्र के मत्स्य विशिष्ट लक्षण दर्शाते हैं। हमारे तट में उपलब्ध ऑयल सारडीन जाति ने इन कुछ सालों में निकटतम संयोजन में महत्वपूर्ण फर्क जुलाई के 2-3% के मुकाबले दिसंबर-जनवरी में 18-20% परिवर्तन दिखाया। यही जाति अब जो परिवर्तन दर्शा रही है वह केवल 2-3% से 11-12% ही है। रासायनिक संयोजन खास समूह में और खास जाति में भिन्न होता है। एक ही जाति के मत्स्यों में व्यक्तिगत फर्क होता है। एक ही मत्स्य के शरीर के भिन्न अवयव और ऊतक में इस संयोजन में फर्क होता है। अतः मत्स्य के निकटतम संयोजन की तस्वीर काफी जटिल है। सारणी 1 में भिन्न घटकों की सांद्रता में होनेवाले फर्क की जानकारी मिल सकती है।

सारणी 1: मत्स्य के खाने योग्य भाग का निकटतम संयोजन (वजन के आधार पर स्वच्छ ऊतक का प्रतिशत)

	क	ख
जल	28-90	65-80
प्रोटीन	6-28	10-22
तेल	0.2-2.4	1-20
राख (धातु)	0.4-1.5	0.5-2

कॉलम 'क' अधिकतम परिवर्तन दिखाता है, जबकि कॉलम 'ख' आम किस्म के लिए संघटक का स्तर दिखाता है। भारतीय तटीय जल से मत्स्य और कवच मत्स्य की कुछ आम जातियों का निकटतम संयोजन **सारणी 2** में दिया गया है।

सारणी 2: आम आहार मत्स्यों का निकटतम संयोजन (प्रातिनिधिक औसत मूल्य)

स्वच्छ खाने योग्य ऊतक तंत्र मूल्य %

मत्स्य का नाम	नमी	प्रोटीन	चर्बी	राख
मुंबई डक (हारपोडन नेफ्रस)	88.50	7.50	2.00	1.50
कैट फिश (क्लारियस बाटरेकस)	78.70	18.20	1.42	0.97
कटला (कटला कटल)	76.30	19.60	1.30	0.90
कटल मत्स्य (सीपीया जाति)	73.10	20.10	0.35	0.51
ग्रे मुलेट (मुगिल सेफालस)	74.90	20.80	5.10	0.60
ज्यू मत्स्य (सीयाना ग्लाकस)	76.95	20.73	0.99	1.32
लोबस्टर (थेनस ओरियनटालिस)	73.60	21.60	0.35	2.30
मेकरल (रास्ट्रीलीगर कनागुरता)	71.19	21.21	7.51	1.33
मिल्क मत्स्य (चनोस चनोस)	70.90	23.50	3.60	1.40
मृगाल (सिरहिनस मृगाला)	77.10	19.00	1.10	1.40
मुल्लेट (मुगिल पारसिया)	73.80	22.21	4.36	1.38
भसल (पेरना विरीडिस)	76.69	12.55	2.57	2.06
ऑयल सारडीन (सारडीनेल्ला लोंजिसेप्स)	67.01	19.38	11.70	1.73
पेल स्पोट (एट्रोप्लस सुरुओटन्सिस)	75.30	22.50	2.40	0.90
पॉमफ्रेट (काला) (परास्ट्रोमेटीयस नैजर)	73.00	19.00	2.60	1.75
पॉमफ्रेट (सिल्वरा) (पामपस अरजेंटियस)	74.00	18.00	2.90	1.50
झींगा (स्वच्छ पानी) मैक्रोब्राकियम रोज़नबेर्गी)	78.29	21.17	0.27	0.37
झींगा (पीनस इन्डिकस)	76.80	17.50	0.58	1.46
रे (हिमांतुरा जाति)	74.66	17.37	0.40	1.52
रोहू (लाबियो रोहिता)	76.90	19.10	0.20	0.90
शार्क (स्कोलियोडोन जाति)	74.50	21.50	0.75	1.25
सिलवर बेल्ली (लियोग्नाथस बिंडस)	74.70	18.70	0.88	1.97
स्नापर (लुतजानस जाति)	73.00	20.80	1.40	1.87
सोल (सेटोडस एरुमी)	76.50	15.50	1.25	1.75
स्क्विड (लोलिजो जाति)	83.00	14.50	0.80	0.50
तिलापिया (तिलापिया मोसांबिका)	77.30	20.47	0.58	0.90
ट्यूणा (यूथीनस अफिनस)	74.30	18.90	4.50	1.30

कारबोहैड्रेटस, विटामिन, न्यूकलियोटाईडस और अन्य अप्रोटीन नाईट्रोजीनस यौगिक कम मात्रा में विद्यमान होते हैं। यद्यपि मात्रा के आधार पर वे उतने महत्वपूर्ण नहीं हैं फिर भी शरीर को बनाए रखने में वे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और शरीर की वृद्धि और विकास के लिए आवश्यक हैं।

जल

जीवन केलिए जल की आवश्यकता है। यह शरीर का पोषण, उपापचयज आदि के परिवहन का माध्यम है और उनका ज्यादा भाग जल से भरा है। कई अन्य जैविक कार्यों के लिए जल का होना नितांत ज़रूरी है। साधारणतः मत्स्य ऊतक में जल का अनुपात 70-80% के बीच होता है, जबकि बहुत ही कम और अधिक स्तर रिपोर्ट किया गया है। मुंबई डेक (हारपोनदोन नेहीरस) उदाहरण है जिसके पेशी-ऊतक में अधिक और लिपिड मात्रा के अनुपात में एक प्रतिलोम रिश्ता होता है। साधारण तौर पर दोनों का कुल जोड 80% होता है। लिपिड मात्रा में वृद्धि हो तो जल-मात्रा में कमी होती है।

संसाधन के दौरान ऊतक से पानी कम होने से गुण में फर्क संभव है, खासकर उसकी संरचना में। यह इसलिए है कि जल की अनुपस्थिति में, प्रोटीन अणु उसका प्राकृतिक आकार कुछ हद तक खो देता है और इससे मूल संरचना पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

प्रोटीन

मात्रा के हिसाब से प्रोटीन सबसे बडा दूसरा संधटक है। प्रोटीन शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द "प्रोटोस" से हुई है जिसका अर्थ है पहला। यह जीवों में इन संयुक्तों का महत्व दिखाता है। जीवों के निर्माण कार्यों में प्रोटीन का केन्द्रीय स्थान है।

मत्स्य की पेशी में प्रोटीन का अनुपात साधारणतः 16-20% सीमा में होता है। पोषण काल, अण्डजनन चक्र आदि ऊतक की प्रोटीन-मात्रा पर प्रभाव डालता है। लेकिन जल की मात्रा की तुलना में उतना व्यापक नहीं है।

प्रोटीन, अमिनो अम्ल से बना उच्च जटिल अणु है। मत्स्य प्रोटीन में निहित अमिनो अम्ल अन्य जीव प्रोटीन में मौजूद अमिनो अम्ल के समान ही है। लेकिन अमिनो अम्ल का अनुपात विभिन्न मत्स्य प्रोटीनों में अलग-अलग होता है। मत्स्य प्रोटीनों के अमिनो अम्ल संयुक्त की एक खास बात यह है कि जरूरी अमिनो अम्ल के नाम से पहचाने जाने वाले सभी उस में सम्मिलित हैं। (जो स्फूर्ति से संश्लेषित नहीं है बल्कि पथ्य में अनिवार्यतः होना चाहिए)। यह मत्स्य प्रोटीन को पौष्टिक रूप से महत्वपूर्ण बनाता है। अन्य जंतुओं की प्रोटीन मात्रा की तुलना में मत्स्य प्रोटीन में लाइसिन ज्यादा है और ट्रप्टोफान का स्तर कम। कुछ मुख्य प्रजाति मत्स्यों के अमिनो अम्ल संयोजन **सारणी - 3** में दिया गया है।

सारणी 3: कुछ मत्स्य और कवच मत्स्य के पेशी-प्रोटीन का अमिनो अम्ल संयोजन (g अमिनो अम्ल/100 प्रोटीन)

अमिनो अम्ल	कटला (कटला कटला)	रोहू लेबियोरोहिता	तेल सारडीन सारडिनेला लांजिसेपस	सीर (स्कोंबरोमोरस) गुटाटस	शार्क (स्कोलियोडोन) SPP.	काट फिश (अरियस मकुलाट्स)	झींगा (पीनस इंडिका)	मसल (पेरना विरिडस)	कटल मत्स्य (सीपिया SPP)	लॉबस्टर (पेनुलस सेवेली)
आसपारटिक अम्ल	10.25	9.32	10.05	7.16	9.23	7.73	10.02	9.56	7.68	6.42
थ्रीयोनिन	5.61	4.76	4.66	3.66	5.07	3.43	3.20	4.00	2.83	2.57
सीरिन	3.31	3.27	3.91	2.89	3.18	2.80	3.33	3.63	2.65	2.69
ग्लुटामिक अम्ल	17.42	12.98	14.33	14.13	12.91	12.40	17.73	14.96	8.99	9.18
प्रोलिन	1.92	4.13	1.93	1.83	3.26	2.07	7.53	4.31	5.96	5.70
ग्लीसीन	9.01	3.84	3.77	3.16	6.64	3.90	7.75	9.32	2.44	3.64
अलानिन	5.44	6.49	4.88	4.75	5.46	6.03	6.86	5.10	3.36	4.36
वालिन	6.31	4.24	4.73	1.01	5.27	4.21	3.48	4.74	1.36	1.27
सिस्टिन	0.96	2.06	1.63	4.63	0.42	0.66	0.74	2.43	0.65	2.32
मिथियोनिन	2.10	2.05	2.80	2.29	1.38	1.94	3.87	1.75	1.17	1.63
आईसोल्यूसिन	4.38	5.66	3.29	7.08	6.17	7.52	3.10	5.88	2.57	3.61
ल्यूसिन	9.19	8.25	5.97	12.78	10.17	5.78	7.24	7.94	5.23	4.79
थैरोसिन	4.32	3.22	3.41	1.56	2.74	1.54	1.83	4.15	0.49	3.16
फीनैल अलैनिन		3.70	3.93	4.18	3.31	2.16	3.33	4.67	0.63	3.16
हिस्टीडिन	5.25	6.17	5.57	3.69	5.23	2.42	2.26	4.46	3.01	1.89
लिसिन	8.30	12.22	10.64	9.16	12.83	7.83	8.51	10.46	7.24	6.21
अरजिनाहन	5.82	3.60	6.47	6.19	4.78	5.84	2.05	7.26	5.18	1.60
ट्रिप्टोफान	1.18	1.28	1.89	-	-	-	-	-	-	-

अन्य स्रोतों की तुलना में मत्स्य प्रोटीन शीघ्र पचनीय है। मत्स्य प्रोटीन की एक और खासियत यह है कि वह कोलेस्ट्रोल मात्रा को घटा सकता है। यह मत्स्य के खास अमिनो अम्ल संयोजन से संबंधित है।

लवण घोल में विलेयता के आधार पर मत्स्य पेशी के प्रोटीन को तीन मुख्य वर्गों में बांटा गया हैं। कम अयनिक ताकतवाली लवण घोल के विलेय खंडों को पेशीद्रव्य प्रोटीन कहा जाता है और मत्स्यपेशी प्रोटीन में इस खंड का अनुपात 25-30% है। ऊतकों में पेशीद्रव्य प्रोटीन की

मात्रा उच्चतम (35-40%) है। उच्च अयनिक ताकत लवण घोल में विलेय को पेशीतन्तुक प्रोटीन में वर्गीकृत किया गया है। एक्टिन, मयोसिन, ट्रोपोमैसिन, ट्रोपोपिनस आदि इस समूह के मुख्य संघटक हैं। इस वर्ग के मत्स्यों में 65% प्रोटीन के लिए पेशी उत्तरदायी है (स्तनीय वर्ग 40%) प्रकार्यात्मक गुण निर्धारण के लिए पेशीतन्तुक प्रोटीन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उदासीन लवण घोल, पतला क्षार और अम्ल में न घुलनेवाले वर्ग को पीठिका प्रोटीन के नाम से वर्गीकृत किया गया है। यह संयोजी ऊतक का प्रमुख संघटक है। दूसरे जंतुओं के मांस की तुलना में मत्स्य पेशी में पीठिका प्रोटीन का अनुपात तुलनात्मक रूप से कम है और यह मत्स्य पेशी की विशिष्ट संरचना के लिए उत्तरदायी है। जाति, स्वभाव, परिपक्वता की अवस्था आदि के आधार पर भिन्न वर्गों के अनुपात में परिवर्तन होते हैं। उपास्थिमीन में पीठिका प्रोटीन का अनुपात लगभग 10% है जबकि टीलियोस्ट में यह 3-4% है। उसी प्रकार तलमज्जी जाति की तुलना में पेलैजिक जाति में उच्च अनुपात में पेशीद्रव्य प्रोटीन होता है।

लिपिड

मत्स्यऊतक में लिपिड़ (चर्बी और तेल) परिवर्तनीय हद तक विद्यमान है और उसके महत्वपूर्ण जीवाणवीय प्रकार्य हैं। यह उच्च विषमजातीय मिश्रण है जिसमें भिन्न रासायनिक स्वभाव के संघटक हैं। ट्रैगलीसरोईडस, फोसफोलिडस, वाक्स एस्टर्स, हैड्रोकार्बनस, चर्बी विलेय विटामिन, कोलस्ट्रोल आदि इस वर्ग के अन्तर्गत मुख्य हैं। अक्सर लिपिड, चर्बी या तेल के पर्यायवाची के रूप में प्रयुक्त होते हैं। चर्बी या तेल साधारण तौर पर प्रयोग किए जानेवाले पद हैं और वसा अम्लों के ग्लीसरोइडस को प्रतिनिधित्व करते हैं, जो इस वर्ग के प्रमुख संघटक हैं।

संचयित ऊर्जा के रूप में मत्स्य में लिपिड का प्रमुख कार्य है। जब आहार में से ज्यादा ऊर्जा मिलती है तब वह ट्रैगिलसरैडस के रूप में परिवर्तित होता है जिसका उपयोग कार्यशक्ति कम होने पर किया जाता है। फोसफोलिपिड, लिपिड का एक और रूप है जो कि कोशिका झिल्ली का संघटक है। अतः मत्स्य के भिन्न लिपिड वर्ग की महत्वपूर्ण जीवाणवीय भूमिका है।

मत्स्य के निकटतम संयोजन के आंकडों से यह देखा जा सकता है कि लिपिड मात्रा का फर्क प्रोटीन से ज्यादा है। यह मुख्यतः संचयित चर्बी (डीपो चर्बी) की मात्रा के फर्क के कारण हैं। ऑयल सारडीन (सारडीनोला लोंजीसेपस) जैसी जाति में मौसमी फर्क में लिपिड मात्रा का फर्क प्रमुख होता है। ऊतक में फोसफोलिपिड का अनुपात साधारणतः 0.7 से 1.0% है (वज़न के आधार पर) और यह अधिक सीमा तक प्रभावित नहीं है। कई प्रकार के कारणों के प्रभाव से कुल लिपिड मात्रा में परिवर्तन आता है।

मत्स्य लिपिड का वसा अम्ल संयोजन

वसा अम्ल ज्यादातर लिपिड अणुओं का ज़रूरी संघटक है और लिपिड की रासायनिक और भौतिक अवस्था ज्यादातर उनमें विद्यमान वसा अम्ल के आधार पर होती है। मत्स्य लिपिड में आम तौर पर 10-22 कारबन परमाणु का वसा अम्ल होता है। मत्स्य लिपिड में संतृप्त, असंतृप्त और पोली असंतृप्त वसा अम्ल विद्यमान हैं। इससे पता चलता है कि लिपिड का संयोजन बहुत जटिल है। मत्स्य लिपिड का एक महत्वपूर्ण लक्षण हैं - इकोसापेंटयोनिक अम्ल (EPA) और डोकोसाहेक्साहयोनिक अम्ल (DHA) जैसे पोली असंतृप्त वसा अम्ल की लंबी कडियों की प्रचुरता। यह पूफा (PUFA) मत्स्य को विशिष्ट गुण प्रदान करती है। वे सीरम कोलस्ट्रोल-मात्रा को कम करने और थ्रोंबोटिक हृदय परेशानियों को रोकने में सहायक होती हैं। इन वसा अम्लों की एक और खासियत यह है कि वे ज्यादातर समसंख्या वाले होते हैं। मत्स्य लिपिड में विषम संख्यावाले वसा अम्ल का अनुपात बहुत कम हैं। उसी प्रकार पोली असंतृप्त वसा अम्ल में द्विबंध सम संरूपण में होता है और मिथलीन ग्रूप द्वारा अलग किया जाता है।

जैसे अन्य संघटक में जाति, स्वभाव आदि के आधार पर परिवर्तन होता है वैसा ही परिवर्तन वसा अम्ल में भी होता है। जो हो, मत्स्य लिपिड के प्रमुख संतृप्त वसा अम्ल मिरिस्टिक, पालमिटिक और स्टीयरिक अम्ल हैं। पालमिटोलिक और ओलिक अम्ल प्रमुख एकल संतृप्त अम्ल है और पोली असंतृप्त में इकोसपेन्टेनोइक और डाकोसाहेसौनोईक अम्ल प्रमुख हैं। यद्यपि भिन्न लिपिड वर्गों में वसा अम्लों की संख्या 30-40 तक होती है, ऊपर के सात और आठ वसा अम्ल कुल मिलाकर 80 प्रतिशत से ज्यादा होता है। कुछ जाति के मत्स्य और कवच मत्स्य के वसा अम्ल का संयोजन **सारणी 4** में दिया गया है।

मत्स्य लिपिड को मज़बूत कारडियो संरक्षक एजेंट के रूप में पहचाना गया है। यह लिपिड में विद्यमान लंबी कडी n-3 पोली असंतृप्त फैटी अम्ल के कारण हैं। स्नायु ऊतक, मस्तिष्क आदि के कार्य में पोली असंतृप्त फैटी अम्ल आवश्यक है। इनमें ऐंटी कारसिनोजेनिक गुण भी हैं। लेकिन मत्स्य तेल के उन्नत असंतृप्तीकरण से कई बेजोड समस्याएँ भी होती हैं। अगर बहुत सावधानी नहीं बरती जाय तो ये उच्च असंतृप्त फैटी अम्ल ओक्सिडाईसड हो जाते हैं। परिणामस्वरूप पेरोक्साईडस तैयार होता है और विकृत गंधिता उत्पन्न होती है। फैटी अम्ल का खास पौष्टिक गुण ऑक्सीकरण के कारण नष्ट हो जाता है और यह उत्पाद स्वीकार्य और पौष्टिक रूप से असुरक्षित है।

खनिज

प्रोटीन और लिपिड जैसे मत्स्य में विद्यमान खनिज का कोई विशेष पौष्टिक महत्व नहीं होता। समुद्र के पानी में विद्यमान लगभग सभी खनिज मत्स्य ऊतक में भिन्न तरह से मौजूद हैं। कुल खनिज में कैल्सियम और फोसफोरस 70-80% होते हैं। अन्य महत्वपूर्ण घटक हैं तांबा,

सारणी 4: मत्स्य और कवच मत्स्य के कुछ वर्गों के लिपिड का वसा अम्ल संयोजन (कुल वसा अम्ल का वज़न के आधार पर %)

वसा अम्ल	पेलस्पोट (एट्रोप्लस सुराटेनसिस)	मिल्क फिश (कानोस कानोस)	सीर (स्कांबिरोमोरस)	ट्यूणा (यूथीनस अफिनिस)	पाम्फेट (स्ट्रोमाटियस चिनेनसिस)	तेल सारडीन (सारडिनेल्ला) लोंजिसेप्स	शार्क (स्केलिमोडोन) सोरोको वाह)	झींगा (मेटापिनस डोबसोनी)	झींगा (पीनस इंडिकस)
Saturated									
C 12:0	-	-	0.3	0.1	-	0.1	-	-	-
C 13:0	-	-	0.1	0.1	-	-	-	0.4	0.2
C 14:0	1.8	2.9	10.4	2.0	10.0	9.1	0.5	1.9	2.5
C 15:0	0.7	0.8	1.5	1.4	0.8	0.6	2.3	0.7	0.6
C 16:0	21.2	22.3	26.0	30.5	31.5	23.5	32.3	24.3	26.3
C 17:0	-	-	3.1	2.1	0.8	1.8	0.6	2.2	0.9
C 18:0	11.7	7.6	9.3	16.6	17.6	5.6	17.2	13.1	12.1
C 19:0	0.6	0.8	-	-	0.6	0.8	-	-	-
Total	36.0	34.4	50.7	52.8	61.3	41.5	52.9	42.6	42.6
Monounsaturated									
C 16:1 n7	8.0	5.7	11.2	2.5	1.5	11.8	2.0	9.3	8.0
C 17:1 n7	-	-	-	-	-	-	-	0.9	0.4
C 18:1 n7	22.6	15.0	15.0	24.0	13.5	8.1	12.9	11.2	11.5
C 20:1 n9	-	3.5	2.0	0.9	4.0	0.8	2.5	0.7	0.9
C 22:1 n9	-	1.1	0.0	-	1.0	-	-	-	0.1
Others	-	-	2.5	1.9	1.0	-	-	0.8	1.8
Total	30.6	25.3	30.7	29.3	21.0	20.7	17.4	22.9	22.7
Polyunsaturated									
C 18:2 n6	4.0	3.0	2.4	0.6	3.9	1.3	0.60	2.2	1.8
C 18:3 n3	5.2	2.2	1.5	0.2	2.5	0	-	0.5	0.3
C 18:4 n3	-	1.9	0.9	0.7	4.0	0	-	0.9	1.2
C 20:2 n6	2.7	-	0.4	-	-	0.2	-	0	-
C 20:3 n6	2.3	-	-	-	-	0	-	0	-
C 20:4 n6	6.0	5.4	0.3	0.9	1.0	2.5	6.7	4.9	6.5
C 20:5 n3	1.9	4.3	3.5	10.2	8.0	11.8	1.7	15.1	14.2
C 22:4 n6	1.6	2.5	-	1.1	0.9	0	-	0.7	-
C 22:5 n3	3.0	5.7	0.5	1.1	1.6	0	7.4	1.1	1.5
C 22:6 n3	4.9	13.5	8.2	3.2	8.5	15.5	9.3	8.9	8.2
Others	1.4	1.7	0.4	-	2.6	0	-	-	-
Total	33.0	40.2	18.1	18.0	33.0	31.3	25.7	34.3	33.7
Unidentified	-					5.3	4.1		1.0

लोहा और कोबाल्ट आदि। मत्स्य आयोडिन एक अन्य महत्वपूर्ण स्रोत है।

विटामिन

जल विलेय (विटामिन बी ग्रूप) और चर्बी विलेय (विटामिन A D E) विटामिन मत्स्य में

मौजूद हैं। इस में दिलचस्पी बात यह है कि कुछ वर्ग के विटामिन A और D का जिगर संचयन है। कुछ वर्ग के शार्क के जिगर तेल में विटामिन A 13300 IU प्रति ग्राम में मौजूद है। समीप काल तक उसका विटामिन अनुपूरक के रूप में उपयोग किया जाता था।

नोन प्रोटीन नाइट्रोजिनियस कांपाउंडस

यह जलविलेय कम आणविक वज़न नाइट्रोजन है जिस में प्रोटीन रहित प्राकृतिक यौगिक है, टेलियोस्ट के कुल नाइट्राजन के 9 से 18% रखता है। वाष्पशील आधार के अमोणिया और ट्राईमिथलामिन ऑक्साइड (TMAO), क्रियाटिन, मुक्त अमिनो अम्ल, नूक्लियोटाइड और प्यूरिन क्षारक और उपास्थीय मत्स्य के संबंध में हो ता यूरिया इस खंड के मुख्य घटक हैं। संयोजन में जाति के आधार पर फर्क संभव है और आकार, मौसम और ऊतक नमूनों के आधार पर भी फर्क होता है।

समुद्री मत्स्य के एन.पी.एन. खंड में TMAO एक प्रमुख भाग है। लेकिन स्वच्छ पानी मत्स्य के एन पी एन खंड में टी एम ए ओ नहीं पाया जाता है। पेशी में टी एम ए ओ की मात्रा जाति, मौसम, मत्स्यन क्षेत्र आदि पर आधारित है। सामान्यतः उपास्थिमीन और स्क्विड (75-250 मि ग्रा N/100 ग्राम) में उच्च मात्रा में पाया जाता है। कोड में कम दिखाई देता है (60-120 mg N/ 100 ग्राम) जबकि फीता मत्स्य में और पेलाजिक मत्स्य में सबसे कम रहता है। TMAO उपास्थिमीनों में परासणनियमन का कार्य करता है।

मात्रात्मक रूप में क्रियेटिन NPN खंड का प्रमुख घटक है। आराम करते समय मत्स्य में ज्यादातर क्रियेटिन फोसफारिलेट उत्पन्न होता है और पेशी संकुचन के लिए ऊर्जा प्रदान करता है। NPN खंड में मुक्त अमिनो अम्ल ज्यादा रहता है। मत्स्य में टोरिन, अलानिन, ग्लैसिन और अम्ल सहित इमिडज़ोल अधिक होते हैं। अमिनो अम्ल निहित इमिडाज़ोल में हिस्टीडिन अधिक ध्यान आकर्षित करता है क्योंकि उसे जीवाणुवीय तौर पर डीकारबोक्सिलेट करके हिस्टमाइन बना सकता है। सक्रिय गहरे लाल मांसवाले ट्यूना और मेकरेल में हिस्टमिन की मात्रा ज्यादा है। मृत मत्स्य में न्यूकलियोटाईडस और न्यूक्लियोटाईड खंड की मात्रा मत्स्य की अवस्था के आधार पर होती है।

संसाधन और संचयन के दौरान प्रमुख और लघु संघटक में बदलाव आता है और उनकी अन्योन्यक्रिया से शरीर में रसायन का निर्माण होता है जिसका अंत में मत्स्य के गुण के मूल्यांकन करने के लिए मापन के रूप में उपयोग किया जाता है।

अतः मत्स्य का जीवरासायन और पोष्टिक गुण कई दृष्टियों से अद्वितीय है। बनी-बनाई जीवरासायनिक संयोजन से मत्स्य का जीवरसायन उत्पादित करने की कोशिश की गई है, खासकर वसा अम्ल संयोजन की दृष्टि से। यदि हम EPA और DHA के साथ उच्च मात्रा गुण संपन्न मत्स्य का उत्पादन और टोकोफरोल जैसे प्राकृतिक प्रति ऑक्सीकारक गुण संपन्न का पर्याप्त मात्रा में उत्पादन कर सकते हैं तो यह एक बडी उपलब्धि होगी। जीवरसायनिज्ञों की कोशिश से शायद अच्छे परिणाम निकल सकते हैं।

भारतीय खाद्य मत्स्य की जीवाणुवीय गुणता

पी.के. सुरेन्द्रन, निर्मला तम्पुरान

सारांश

खेती से उत्पादित मत्स्य एवं झींगों की जीवाणुवीय गुणता समुद्री मत्स्यन से प्राप्त मत्स्य एवं झींगों से भिन्न होती है। उसी तरह समुद्री, खारा जल एवं स्वच्छ जल मत्स्य एवं कवच मत्स्य की जीवाणुवीय वनस्पति के बीच भिन्नता होती है। विकृत जीवाणु की संख्या एवं भार उत्पाद की गुणता एवं संग्रहण समय को निश्चित करते हैं। जीवाणुवीय प्रदूषक एवं रोगजनक की उपस्थिति द्वारा मत्स्य की उपभोग-गुणता प्रभावित होती है। इसी लिए मत्स्य-गुणता में सुधार एवं परिरक्षण की आवश्यकता है। साथ ही जीवाणुवीय वनस्पति के जन्मजात स्वाभाव को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक प्रकार के मत्स्य के लिए अलग से गुणता मानकों को प्रतिपादित करने की आवश्यकता भी है।

कुछ समय पूर्व तक भारतीय उप-महाद्वीप के मत्स्यन में समुद्री सेक्टर का एकाधिकार था। अति शोषण और समुद्री-मत्स्यन-स्थल की स्थिरता के कारण मत्स्यन उद्योग का ध्यान अंतःस्थलीय मात्स्यकी विशेषकर खेती मात्स्यकी की ओर उन्मुख हुआ है। मात्स्यकी के विकास में जलकृषि को एक प्रमुख क्षेत्र के रूप में पहचाना गया है।

शिकार का प्रमुख भाग निर्यात के लिए संसाधित किया जाता है और विश्व बाज़ार में रु. 6500 से ज्यादा का विदेशी मुद्रा का अर्जन करता है। निर्यात बाज़ार के अलावा शिकार का बड़ी मात्रा में आंतरिक उपभोग के लिए लिया जाता है। यह देख गया है कि शिकार किये मत्स्य का 50% उपभोग उत्पादन केन्द्र के आसपास में ही होता है। तट से 200 कि मी की दूरी में स्थित माँग-केन्द्रों में 43% और 7% इस से दूर स्थित केन्द्रों में होता है (सथीय दास और अन्य, 1995)।

आंतरिक एवं घरेलू बाज़ारों के विस्तार से और औसत मत्स्य उपभोक्ता की सामान्य गुणता जागरूकता के कारण निजी निर्माताओं द्वारा मत्स्य फुटकरों के लिए सख्त गुणता आवश्यकताओं को बनाया रखना ज़रूरी हो गया है।

मत्स्य की गुणता कई प्रकार के आंतरिक एवं बाह्य तथ्यों द्वारा प्रभावित होती है। मगर

सूक्ष्मजीव विज्ञान ज्यादातर अंतिम गुणता को निश्चित करने में मुख्य भूमिका निभाता है। शीवेन एवं होबस (1967) का कथन है कि मत्स्य की जीवाणुवीय वनस्पति उस पर्यावरण का प्रतिबिम्ब है जहाँ से इस का शिकार किया जाता है तथा जहाँ मत्स्य की गुणता में पर्यावरण की भूमिका का महत्व है।

मत्स्य की गुणता के निर्धारण में जीवाणु मुख्य भूमिका निभाता है। गुणता पर उसके प्रभाव के आधार पर मत्स्य एवं मत्स्य उत्पादों के सूक्ष्मजीवों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। पहले में विकृत जीवाणु होते हैं। अवांछनीय परिवर्तन एवं उपभोग के लिए वे अस्वीकार्य होते हैं। ये जीव सामान्यतः मत्स्य में उपस्थित रहते हैं। मगर विकृति विभिन्न कारणों से प्रभावित होती है। संसाधन द्वारा वे सामान्य गुणता नियंत्रण उपाय के भाग के रूप में विरोध करती हैं। मत्स्य/ मत्स्य उत्पादों में विकृत जीवाणु किसी भी समय उपस्थित रहने के कारण बर्फ़ में मत्स्य के संग्रहण के दौरान निधानी आयु का निर्धारण करते हैं।

दूसरे में जनस्वस्थ विशेष के तथाकथित सूक्ष्म जीव आते हैं जो जीवाणु मत्स्य में सामान्यतः उपस्थित नहीं होते और उपभोक्ता के लिए उनकी उपस्थिति संकट को उत्पन्न करते हैं। वे सलमोनिल्ला एवं विब्रियो क्लोरा जैसे नमूनों में अनुपस्थित होते हैं। कुछ अन्य मत्स्यों में ये स्वाभाविक रूप में उपस्थित हो सकते हैं। वे उपभोक्ता को संकट उत्पन्न नहीं करते। ऐसे जीवों की सीमा होती है। उदाः स्टफीलोकोकस औरस।

जीवित मत्स्य में त्वचा सतह, गिल या आंत में जीवाणु रहते हैं। प्रवेश के मार्ग के आधार पर मत्स्य शरीर पर सूक्ष्मजीव उपस्थिति को निम्नानुसार तीन वर्गों में समूहित किया जा सकता है।

1) जलीय पर्यावरण में स्वाभाविक रूप में जीवाणु उपस्थिति।

2) जलीय पर्यावरण के प्रदूषण के द्वारा जीवाणु उत्पन्नता।

3) हस्तन संसाधन एवं विपणन के समय जीवाणु की खाद्य में उपस्थिति।

साफ अवस्था में जीवाणु स्वाभाविक ढ़ग से उपस्थित रहते हैं। उन्हें सहभोजी वनस्पति कही जा सकती है। दूसरा समूह प्रदूषण का सूचक या व्यवहार का अच्छा निर्माणक है और गुणता की सूची के रूप में विचार किया जाता है। हस्तन के बाद के दौरान मत्स्य या झींगा में जीवाणु प्रविष्ट होते हैं और यह स्थलचरी प्रदूषक है। समुद्र, नदी और झीलों में कई हानिकारक, रोगजनक जीवों के मल जल में मिल जाते हैं। यह जीव मत्स्य निकाय में संकेन्द्रीत होते है। अगर आसपास साफ नहीं है तो संसाधन व्यवहार के दौरान मत्स्य में भी वे प्रवेश करते हैं। इस प्रपत्र में शिकार एवं खेती स्थल के भारतीय खाद्य मत्स्यों के इन पहलुओं पर चर्चा करने का

प्रयास किया गया है।

कुल संख्या के साथ-साथ विभिन्न जीवाणु का जातिवर वितरण आंतरिक या बाह्य तथ्यों के आधार पर मत्स्य में भिन्न होता है। आंतरिक तथ्यों के नमूनों में यह जन्मजात है जैसे मत्स्यों के प्रकार, आयु, भौगोलिक स्थान आदि को नियंत्रित नहीं किया जा सकता है। जहाज़ के बोर्ड पर या अवतरण केन्द्र से स्वच्छ रूप से शिकार किये गये मत्स्य में मात्रात्मक और गुणात्मक जीवाणु वितरण नमूनों में स्वाभाविक जीवाणुवीय संख्या को दर्शाता है।

कोचिन से शिकार किये गये स्वच्छ मत्स्य के ज्यादातर मामलों में कुल प्लेट गणना ज़्यादातर 10^3 से 10^5 है। 10^7 के उच्च गणना मत्स्य और झींगों के आंतों में पाया गया है। आंत में जीवाणुवीय गणना अधिकतम और त्वचा सतह में अल्पतम है। आंत में उच्च जीवाणु गणना यह सूचित करती है कि संग्रहण के दौरान आहारनली को निकालना है। ICMSF विशेष विवरण के अनुसार 10^6 के ऊपर की जीवाणु गणना को अस्वीकार्य गुणता (ICMSF, 1974) के रूप में देखा गया है। इन मानकों के अनुसार कोचिन में अवतरित मत्स्य एवं झींगे को स्वीकार्य माना गया है।

समुद्री खारा जल या स्वच्छ जल क्षेत्र से शिकार किये ताज़े मत्स्य एवं झींगों में प्रमुख जीवाणु प्रकारों को **सारणी- 2** में दिया गया है। स्वच्छ जल मत्स्य जैसे रोहू में माईक्रोकोसी एवं बेसिलसीय जाति से संबंधित उच्च % का Gram + कोसी वहित करता है और दोनों मिलकर कुल का 50% समाविष्ट होता है। Gram-ve भी उपस्थित हो जिनमें सुडोमोनस तथा झटीरोवैक्टियाबि प्रमुख हैं। खारा जलीय मत्स्य में Gram + माईक्रोकोसी केवल 25% या कम रहते हैं और gram नकारात्मक सुडोमोनस विब्रिसीओस एसीनीटोबक्टर और मोरेक्सील्ला प्रबल होते हैं। समुद्री पर्यावरण में gram नकारात्मक के स्पष्ट आधिक्य प्राप्त होते हैं जीवाणु विविधता के संबंध में यह कह सकते हैं कि निवासियों के बीच ज्यादा परिवर्तन नहीं है, मगर उनकी प्रतिशत प्राप्ति भारी परिवर्तित है। कवच मत्स्य जीवाणु को आश्रय देता है जोकि फिन मत्स्य से बहुत भिन्न होते हैं।

इन्द्रियग्राही अवक्षारण और टी पी सी के आधार पर गुणता मूल्यांकन के अच्छे औजार हैं **(सारणी 3)** बर्फ़ में विभिन्न मत्स्य प्रकारों की निधानी आयु का आकलन है। परिणाम यह सूचित करता है कि प्रारंभिक वनस्पति विभिन्न मत्स्यन पर्यावरण में भिन्न होने पर भी विकृत वनस्पति तुलनीय है। समुद्री मत्स्य 6-8 दिन की अल्पतम निधानी आयु रखती (सुरेन्द्रन, 1980) जबकि खारा जल मत्स्य बर्फ में संग्रहण आयु 12-14 दिन होती, (सुरेन्द्रन एवं अन्य 1989) स्वच्छ जल मत्स्य को 18 दिन या उस से ज्यादा समय के लिए संग्रहित किया जा सकता है (सुरेन्द्रन एवं गोपकुमार, 1991)। एक रोचक अवलोकन यह है कि जब TPC 10 मिलीयन

तक पहूँचने पर इन्द्रियग्राही रूप में मत्स्य संपूर्णतः अस्वीकार्य होते हैं। समुद्री मत्स्य में विकृत बू देखी गयी मगर स्वच्छ जल में संपूर्णतः अनुपस्थित थी। दूसरी ओर, दुर्गन्ध और अवपंक प्रकटन के साथ 6-8 दिन में समुद्री मत्स्य सारडीन और बाँगडा विकृत प्रकट होता और यह मिलीयन/ग्रा के TPC अनुरूप होता है। (सुरेन्द्रन एवं गोपकुमार 1991)। यह खोज सूचित करती कि विकृति में जीवाणु की भूमिका स्वच्छ जल मत्स्य के संबंध में निश्चय ही सीमित है।

पर्यावरण के प्रदूषण से मत्स्य की गुणता में क्षति होती है और गणक जीवाणु प्रदूषक जिन्हें सूचक जीवाणु द्वारा आंकलित किया है। इस समूह के मुख्य सदस्य हैं कुल कोलीफार्म और ई. कोली, मल स्ट्रप्टोकोसी और क्लोस्ट्रडीयम परफिन्जीनीस। अन्य पर्यावरण की तुलना में स्वच्छ जल मत्स्य में इस की गणना अधिकतम थी। इस मामले में भी मत्स्य एवं झींगे नमूनों के बीच भिन्नता है। **(सारणी 4)** इसलिए समुद्री मत्स्य/झींगे में मल जीवाणु को पश्च पैदावार संदूषण के परिणाम स्वरूप माना जाता है जबकि खेती किये मत्स्य/झींगे में यह अन्तर्विष्ठ है।

मत्स्य में रोगजनक जीवाणु उपस्थित है या अन्तर्विष्ठ है या हस्तन एवं संसाधन के बाद के चरणों के दौरान संदूषण के परिणाम स्वरूप होते **(सारण 5)** है। समुद्री खाद्य से खोजे गये विभिन्न रोगजनकों को **सारणी 7** में दिया गया है। सलमोनील्ला (नम्बीयार एवं अय्यर, 1990) रोगजनक विब्रियोस (तम्पुरान 1996) सी बोटुलिसम (ललिता एवं गोपकुमार 2000) इन्टरोटोक्सीजनिक स्टफीलोकोकस (संजीव और अन्य 1986) और बेसीलस सीरस (नम्बीयार एवं सुरेन्द्रन, 1999) के वियोजन के रिपोर्ट है। वियोजन का दर कम या निरुद्देश्य और विशेष रोगजनक एवं विशेष पर्यावरण के किसी लगातार सहयोगी के संबंध में कोई सामान्य निष्कर्ष नहीं दिया जा सकता है। मगर यह देखा गया है कि खेती, पर्यावरण एवं वन्य मत्स्य/झींगे की तुलना में रोगजनक का ज्यादा खोज-दर है (सुरेन्द्रन और अन्य 2001) और यह खेती व्यवहार में सहायक हो सकती है।

आँकड़ों से पता चलता है। कि अंतरिक बाज़ार में उपलब्ध मत्स्य की गुणता अल्प है और यह जीवाणु के साथ संदूषित है जो कि पर्यावरण का प्रदूषण एवं जन स्वास्थ्य विशेषता को सूचित करता है। TPC का मूल्य, कोलीफार्म एवं अन्य सूची के जीवाणु समुद्री मत्स्य की तुलना में खेती किये मत्स्य/झींगे में स्वाभाविक रूप से औसत में ज्यादा होते हैं। इस के लिए खेती व्यवहार में सुधार करने के लिए विस्तृत प्रयास किया जाना चाहिए और मत्स्य के विद्यमान मानकों को भी संशोधित करना चाहिए। राइल्ली द्वारा इस संबंध में कच्ची अवरुद्ध झींगों में सलमोनील्ला के मानकों के लिए संशोधन के लिए और पोल्ट्री या लाल मांस जैसे अन्य कच्चे खाद्य उत्पादों के मानकों को पुनः वर्गीकरण की सिफारिश प्रस्तावित है। दाब प्रक्षालन, मन्द ताप उपचार आदि के प्रभावी गुणता-सुधार व्यवहारों के परिचय के कार्यान्वयन की आवश्यकता है।

कच्ची सामग्री का उचित प्रशीतन एवं अंतिम उत्पादों के गुणता-अनुरक्षण के लिए ज़ोर दिया जाना चाहिए। अन्य संभावी उत्पादों के लिए स्वच्छ जल मत्स्य की लम्बी संग्रहण-स्थिरता को अधिकतम शोषित करके अपवर्तन द्वारा उपयोग किया जा सकता है। घरेलू व्यापार में कुछ अनिवार्य गुणता-नियंत्रण की अवश्यकता है जो निर्यात बाज़ार में कदम रखने के लिए भी आवश्यक है।

सारणी 1: विभिन्न प्रकार के मत्स्यों के शरीर में जीवाणु की कुल प्लेट-गणना

मत्स्य/झींगा	त्वचा सतह गणना x 10^3	गिल गणना x 10^3	आंत गणना गणना x 10^3
स्वच्छ जल मत्स्य/झींगा			
रोहू (लेबियो रोहीता)	21	68	75
कल्बसू (एल कल्बसू)	4.0	63	28
मृगल (सीरहीस म्रिगला)	16	15	54
माक्रोब्रिकीयम रोसनबर्गी	9100	-	-
खारा जल मत्स्य/झींगे			
कटला (कटला कटला)	7	159	8280
पेलस्पट (इट्रोप्लास सूरटेन्सीस)	1	23	115
दूध मत्स्य (कैनोस कैनास)	0.8	19	97
पीनस इन्डीकस	4600	प न	प
समुद्री मत्स्य/झींगा			
सारडीन सारडीनेल्ला लाजीसीप्स	34	120	5700
बाँगडा रस्टीलीजेर कनागुरता	85	730	3600
पीनस मोनोडोन	265	प न	प न

प न - परीक्षित नहीं

सारणी 2: विभिन्न पर्यावरण के मत्स्य/कवच मत्स्य पर जीवाणु के विभिन्न समूह का वितरण

मत्स्य/झींगा	समूह % प्रतिशत का प्रचलन			
	>20	19-10	9-5	<5
रोहू FW	माईक्रोकोकस सुडोमोनस	एसीनेटोबैक्टर इन्टरोबैक्टरीसी	बेसिलस	–

एम. रोसनबर्गी FW	इन्टरोबैक्टरीसी	बेसिलस	–	–
	सुडोमोनस	एरोमोनस		
	माईक्रोकोकस			
पेर्ल स्पोट BW	माईक्रोकोकस	मोराक्सेल्ला	विब्रियो	इन्टरोबैक्टरीसी
	सुडोमोनस	अलकालिजेनेस		
फलवोबैक्टीरिया				
				बेसिलस
पी.इन्डीकस BW	सुडोमोनस	बेसिलस	एरामोनस	
इन्टरोबैक्टीरियसि				
	विब्रियो		एसीनीटोबैक्टर	
सारडीन	विब्रियो	एरोमोनस	–	बेसिलस
(समुद्री)				माईक्रोकोकस
इन्टरोबैक्टीरियस				
पी. मोनोडोन	सुडोमोनस	एरोमोनस	–	बेसिलस
(समुद्री)	विब्रियो	एसीनेटोबैक्टर	–	बेसिलस
				माईक्रोकोकस
				इन्टरोबैक्टीरियस

सारणी 3: निधानी आयु द्वारा मूल्यांकित विकृति, अस्वीकार स्तर पर टी पी सी और विभिन्न पर्यावरण में मत्स्य/कवचमत्स्य में उपस्थित प्रबल जीवाणुवीय जातियाँ

मत्स्य/झींगा	निधानी आयु (दिन)	अस्वीकार पर TPC गणना /g.	प्रबल जीवाणुवीय जातियाँ सुडोमोनस
रोहू	14-18	10^6	सुडोमोनस
म्रिगाल	16-17	10^5 से 10^6	सुडोमोनस
			शेवानेल्ला
			पुट्रीफेसीन्सीस
एम रोसनबेर्गी	16-20	10^7	सुडोमोनस
खारा जल			
तिलापिया	12-13	10^4 से 10^5	सुडोमोनस
कतला	17-18	10^7	सुडोमोनस

पी. मोनोडोन (समुद्री)	10-14	10^7 से 10^8	सुडोमोनस
सारडीन	5-7	10^6-10^7	सुडोमोनस
बाँगडा	6-8	10^6-10^7	सुडोमोनस
पी. इन्डीकस	5-7	10^6-10^7	सुडोमोनस

सारणी 4: मत्स्य/कवच मत्स्य की गुणता के साथ जीवाणुवीय प्रदूषक

स्त्रोत		कुल कोलीफार्म	ई. कोली	सी. पेरफ्रीन्जीन्स	स्ट्रेप्टोकोकी
रोहू	स्व ज	33	शून्य	34	66
म्रिगाल	स्व ज	418	28	शून्य	शून्य
एम. रोसेनबर्गी	स्व ज	3000	1800	उपस्थित	1700
कटला	ख ज	340	100	"	130
पी. मानोडेन	ख ज	70	23	"	420
सारडीन	स	>1400	<100	"	5200
बाँगडा	स	>1400	<100	"	2570
पी. इन्डीकस	स	>1400	<100	"	4570

सारणी 5: मत्स्य/कवच मत्स्य की गुणता के साथ जीवाणुवीय रोगजनक

समुद्रीखाद्य में सामान्यतः उपस्थित रोगजनक	हस्तन एवं संसाधन के दौरान समुद्री खाद्य में प्रवेश करने वाले रोगजनक
क्लास्ट्रिडियम बोटुलिनम	सालमोनेल्ला
विब्रियो पराहेमोलेटीकस	विब्रियो कोलेरी
एरोमोनस हाईड्रोफीला	स्टैफाइलोकोक्स ऑरस
प्लेसी ओमोनस शिजीलोडस	शिजील्ला
–	बेसिलस सीरस
–	यारसीनीय इन्टरोकोलीटीका
–	लीस्ट्रीय मोनोसंपेजीन्स
–	इन्टरोपथीओजेनीक ई. कोली
–	क्लास्ट्राडियम परफ्रिन्जीन्स

सारणी 6:स्त्रोत जिस से रोगजनकों को प्राप्त किया गया है।

रोगजनक	एम	बी	एफ
क्लास्ट्रिडियम बोटुलिनम	उपस्थित	उपस्थित	उपस्थित
विब्रियो पराहेमोलेटीकस	उपस्थित	उपस्थित	अनुपस्थित
एरोमोनस हाईड्रोफीला	उपस्थित	उपस्थित	उपस्थित
प्लेसीओमोनस शि जीलोडस	उपस्थित	उपस्थित	उपस्थित
सालमोनेल्ला	उपस्थित	उपस्थित	उपस्थित
विब्रियो कोलेरी	उपस्थित	उपस्थित	उपस्थित
स्टैफाइलोकोक्स औरास	उपस्थित	उपस्थित	उपस्थित
शिजिल्ला	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अनुपस्थित
बेसिलस सीरस	उपस्थित	उपस्थित	परीक्षण नहीं किया
यारसीनीय इन्टरोकोलीटीका	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अनुपस्थित
लीस्ट्रीय मोनोसंपेजीन्स	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अनुपस्थित
इन्टरोपथीओजेनीक ई. कोली	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अनुपस्थित
क्लास्ट्राडियम परफ्रिन्जीन्स	उपस्थित	उपस्थित	उपस्थित

सागर द्वीप में भूआकृतीय परिवर्तन और मात्स्यिकी : एक सुदूर-संवेदन-अध्ययन

प्रेम कुमार, बी. मीनाकुमारी

सारांश

वर्ष 1995, 1998 और 1999 में उप ग्रह LISS III के संवेदक आंकडों का उपयोग भू-आकृति, भू-उपयोग, भू-आवरण एवं तट पर सुन्दरबन, पश्चिम बंगाल में स्थित सागर द्वीप पर करके यह निष्कर्ष निकाला गया कि वर्ष 1967 से 1999 तक 17 कि मी वर्ग क्षेत्रफल का अपरदन हुआ है। वर्ष 1996-98 के दौरान अपरदन की दर 6.82 वर्ग कि मी प्रति वर्ष थी जो कि वर्ष 1998-99 में 3.62 वर्ग कि मी प्रति वर्ष पायी गयी। इस कम अपरदन की दर का कारण मैंगरूप (तटीय वन्सपति) की अच्छी वृद्धि एवं अपरदन क्षेत्रों में ईंटों की दीवार है। अपरदन द्वारा बह गयी मिट्टी दूसरे स्थानों में जमा हो जाने से नौका वहन में परेशानियां होती हैं। तथा जाल लगाने के स्थानों की भी कमी हो जाती है।

प्रस्तावना : सागर द्वीप, पश्चिम बंगाल के सुंदरबन क्षेत्र का सबसे बड़ा द्वीप है। 1999 के संवेदक आंकडे के अनुसार द्वीप का क्षेत्रफल 202 वर्ग कि मी है। द्वीप का आकार त्रिभुजाकार है जो पश्चिम में हुग्ली, पूर्व में भूरीगंगा और दक्षिण में बंगाल की खाडी से घिरा हुआ है। द्वीप गंगा सागर से कीचुबेडिया 30 कि मी है और अधिकतम चौडाई 12 कि मी है। समुद्रतट से द्वीप की ऊंचाई 6.5 मी. है। उष्णकटिबंधीय चक्रवाती तूफानों का हमेशा खतरा बना रहता है और इन तूफानों से जन-धन की बडी हानि हो चुकी है। पर्यावरण की दृष्टि से सुंदरबन बहुत ही संवेदनशील है। इसलिए सुंदरबन के कुछ द्वीपों को बायोस्फियर रिज़र्व घोषित किया गया है। कपिल मुनि आश्रम के होने की वजह से द्वीप का धार्मिक महत्व है। देश के कोने-कोने से श्रद्धालु यहां गंगा में स्थान करने आते हैं। द्वीप पर लगभग दो लाख जनसंख्या निवास करती है। आशय यह है कि जनसंख्या घनत्व इतना अधिक है कि कुछ निरोधित क्षेत्रों में भी निवास स्थान बनाये हुए हैं। इस प्रकार के क्रिया-कलापों से तटीय संपदा का हनन होता है। यही नहीं, विश्व पारस्थितिकि का परिवर्तन किसी न किसी रूप में असामान्य स्थिति पैदा कर सकता है। इन सब कारणों के ध्यान में रखकर सागर द्वीप पर सुदूर संवेदक आंकडों के आधार पर अध्ययन करने का निश्चय किया गया। प्रस्तुत लेख में सागर द्वीप पर 1967 से 1999 तक भूआकृतीय परिवर्तन और उनका मात्स्यिकी प्रबंधन पर होने वाले अग्रिम प्रभावों को दर्शाया गया है।

सामग्री एवं पद्धति

सुदूर संवेदी अध्ययन के लिए IRS IC LISS III नामक उपग्रह के 1996, 1998 और 1999 के आंकडों का प्रयोग किया गया। अध्ययन से संबंधित पैरामीटरों का निर्धारण करके सर्वेक्षण तकनीक से क्षेत्र का यथार्थ अध्ययन किया गया। इसकेलिए सागर द्वीप के सत्रह स्थानों से डाटा एकत्रित किया गया। स्थान विशेष की पहचान केलिए जी.पी.एस. (ग्लोबल पोजीशिनिंग सिस्टम) का प्रयोग किया गया। प्रयोगशाला में ERDAS IMAGINT सॉफ्टवेयर का प्रयोग किया गया। पूरे क्षेत्र को पांच भागों में वर्गीकृत किया गया। (1) कृषि जनित भूमि (2) भूमिजनित वन भूमि (3) मैंगरुष आवरण (4) केसूरीता वन (5) बालू तट। विभिन्न क्षेत्रों में पडने वाली पैनलों की संख्या को उसके क्षेत्र से गुना करने पर इन वर्गों के क्षेत्रफल का निर्धारण किया जा सकता है। अपरदन और उपरदन जानने के लिए सर्वे ऑफ इंडिया का मानचित्र तथा संवेदक चित्रों को सॉफ्टवेयर की सहायता से एक से दूसरा घिराकर किया गया। यही तरीका तटीय वर्तों को क्षेत्रफल में परिवर्तन के लिए अपनाया गया। सॉफ्टवेयर पैकेज की सहायता से सभी वर्षों की एन डी वी आई का निर्धारण किया गया जिसके लिए संवेदक चित्रों के ईन्फ्रारैड एवं रैड बैंडों का उपयोग किया गया।

परिणाम एवं परिचर्चा हूग्ली और भूरीगंगा का तीव्र प्रवाह अपरदन और उपरदन के मुख्य कारण हैं। 1996 में द्वीप का क्षेत्रफल 223.4 वर्ग कि मी. था जो 1998 में 207.9 वर्ग कि मी और 1999 में 202.6 वर्ग कि मी पाया गया। वर्ष 1996-1998 के दौरान अपवरदन की दर 6.82 वर्ग कि. प्रति वर्ष जो कि 1998-1999 के दौरान घटकर 3.26 वर्ग कि. प्रति वर्ष पाया गया। अपवरदन घटने के कारण तटीय वनों का अच्छा स्वास्थ तथा अपरदन क्षेत्रों में ईटों से संरक्षित दीवार है। वर्ष 1996-98 के दौरान 3.15 वर्ग कि मी की दर से वन विनाश पाया गया जबकि 1998-99 में यह लगभग नहीं के बराबर था। इसके अतिरिक्त 1996-98 के दौरान 8.4 वर्ग कि मी तथा 1998-99 तक 1.9 वर्ग कि मी वन रोपण किया गया। विभिन्न वर्षों की एन. डी.पी.आई. के अध्ययन से पता चला कि 1996-98 में इसकी सीमा 0.2-0.4 से बढ़कर 1999 में 0.4-0.56 तक पहूँची जो तटीय वनसपति के अच्छे स्वास्थ को दर्शाता है। द्वीप की जनसंख्या में तीव्र वृद्धि 1951 में 48000 से 2000 में 1,85000 होने के कारण प्राकृतिक संपदा का अधिक शोषण हुआ है। तटीय वनों का विभिन्न कार्यों के लिए उपयोग से तटीय वनों का शनैः शनैः विनाश से अपवरदन को बढ़ावा मिला है। मैंगरुव किसी भी तट के रक्षक के रूप में कार्य करता है यही नहीं मैंगरुव क्षेत्र मत्स्य की तरह व्यवहृत होते हैं। सागर द्वीप पर ही एक अन्य अध्ययन से यह सिद्ध हो चुका है कि तटीय क्षेत्रों में जहां मैगरुव जंगल है वहाँ मत्स्य शिशुवों की संख्या अन्य स्थानों की तुलना में अधिक पायी जाती है। भारतीय मात्स्यिकी तटीय, प्रदूषण

और अधिक दोहन की समस्या से जूझ रही है। इसलिए तटीय क्षेत्र प्रबंधन में तटीय जंगलों का बहुत महत्व है। संक्षेप में कह सकते हैं कि वनों से तट और तटों से मात्स्यिकी क्षेत्र और मात्स्यिकी क्षेत्रों से मत्स्य का जीवन माना जा सकता है। मछुवारों से बातचीत के दौरान यह ज्ञात हुआ कि अपरदित भूमि, मात्स्यिकी क्षेत्रों में जमा हो जाती है और यह उन क्षेत्रों को उखड़ा बना देती है। इस प्रकार न तो जाल लगाने को जगह मिलती है और नौका वहन में बडी कठिनाई होती है।

निष्कर्ष

तटीय क्षेत्र पारिस्थितिकी की दृष्टि से बड़े संवेदनशील माने जाते हैं। मैगरुव वन, तटीय क्षेत्रों के रक्षक ही नहीं बल्कि भेक मछलियों को आदर्श नर्सरी सी प्रदान करते हैं। मात्स्यिकी प्रबंधन तटीय प्रबंधन का महत्वपूर्ण अंग हैं और भारतीय मात्स्यिकी पहले ही विभिन्न समस्याओं से जूझ रही है। इसलिए समुचित प्रबंधन के लिए इन सभी संबंधित विषयों का अध्ययन करके विशेष नीति बनायी जानी चाहिए। सागर द्वीप पर सुदूर संवेदन अध्ययन इस ओर एक कदम है।

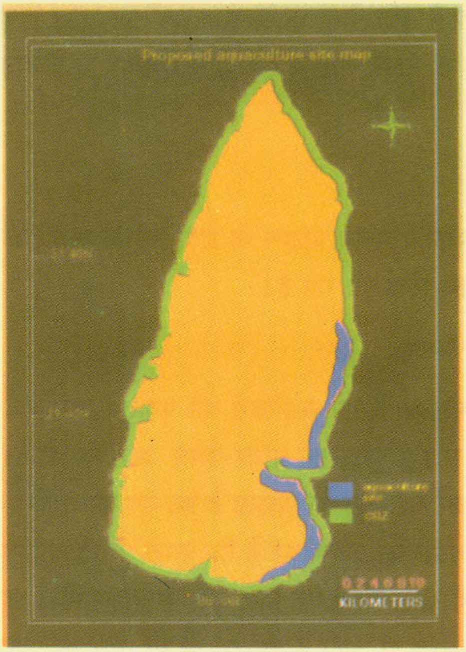

◆◆◆

अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी

जयंत कुमार बंद्योपाध्याय

केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान भारत का एक मात्र संस्थान है जो पिछले पांच दशकों से समुद्री एवं अन्तस्थलीय मात्स्यिकी में मत्स्य संग्रहण तथा पश्च पैदावार संबंधी अनुसंधान के लिए देश को सर्मपित है। संस्थान के छः अनुसंधान केन्द्र हैं जिनमें से चार समुद्री मात्स्यिकी से संबंधित और दो अन्तस्थलीय मात्स्यकी संबंधित अनुसंधानों में कार्यरत हैं। संस्थान के बुरला अनुसंधान केन्द्र की स्थापना सन् 1963 में अन्तस्थलीय मत्स्य प्रग्रहण तथा पश्च पैदावार के समुचित उपयोग से संबंधित अनुसंधानों के आधार पर की गयी। बुरला अनुसंधान केन्द्र उडीसा राज्य के संबलपुर जिले में स्थित है। हीराकुड जलाशय जो राज्य का नहीं अपितु भारत का सबसे बडा जलाशय है और केन्द्र के क्रियाकलापों का मुख्य बिन्दु है। इन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर बुरला केन्द्र के मत्स्य संग्रहण एवं पश्च पैदावार के विभिन्न पहलुओं पर अनुसंधान किये गये हैं।

मत्स्य प्रग्रहण

केन्द्र ने अन्तस्थलीय मत्स्य प्रग्रहण के लिए विभिन्न प्रकार के जालों को विकसित किया है जिनका उल्लेख नीचे दिया जा रहा है।

गिल नेट (क्लोम जाल)

क्लोम जाल मीठे पानी की मछलियों को पकडने का एक सरल एवं प्रभावी तरीका है। हीराकुड जलाशय में इस जाल का प्रचार-प्रसार अतिव्यापक है। केन्द्र में वर्षों तक किये गये अनुसंधानों के आधार पर कहा जा सकता है कि रंग का क्लोम जाल प्रभावी है। केन्द्र को इस जाल के प्रति दिलचस्पी का कारण यह है कि इससे उचित संग्रहण के साथ-साथ जीव विविधता को कोई खतरा नहीं रहता है। फ्रेमड गिल और साधारण गिल बहुतायत प्रयोग में लाये जाते हैं। अनुसंधानों से यह सिद्ध हो चुका है कि 30 मि.मी. बार कणाकार अन्यों की तुलना में प्रभावी माना गया है।

ड्राग नेट (खींचे जाने वाला जाल)

डेग नेट लम्बे समय से मछली पकडने का एक अत्यधिक प्रचलित जाल है जिसे दोनों छोर

से पकडकर मछलियों को घेरकर उसमें फँसाया जाता है। हीराकुड जलाशय में इस प्रकार के जाल बहुतायत प्रचलित थे। परन्तु कम कणाकार तथा जाल के मोटे सूती धागे की वजह से छोटी मछलियाँ भी पकड ली जाती हैं जिससे जलाशय की जैव विविधता को खतरा हो सकता था। केन्द्र से इस और अनुसंधान करके जाल बनाने का धागा तथा मानक कणाकार सुनिश्चित किया गया। संस्तुति की गयी कि पोलीप्रोपलीन के बडे जाल जिनका कणाकार 20 मि.मी. से कम न हो।

मोनोलाईन (कांटा डोर)

नाईलोन के मोटे धागे से बनी लम्बी डोर पर एक से डेढ मीटर के अंतराल पर 20 से 25 से.मी. की शाखा डोर बांधकर उसमें कांटा लगा दिया जाता है। फ्लोट और सिंकर की सहायता से तली, मध्य या सतही मछलियों को पकडा जाता है। कांटे में मछली को लुभाने के लिए उचित चारा लगा दिया जाता है। अन्य कांटों की तुलना में यह 20 नम्बर कांटा मछली पकडने में अधिक सक्षम पाया गया।

मत्स्य पश्च-पैदावार संबंधी अनुसंधान

मत्स्य का बर्फ में संभरण : मछली एक अत्यधिक रखरखाव चाहने वाला भोजन है। मछली के पकडने के समय से लेकर उसे खाने की मेज़ तक पहूँचाने के मध्य विभिन्न प्रकार के जैविक तथा जैव रासायनिक परिवर्तन होते रहते हैं। इसलिए मछली को गंतव्य स्थान तक पहूँचाते विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। अन्यथा मत्स्य प्रग्रहण एक घाटे का सौदा होगा। केन्द्र ने बर्फ प्रयोग करने की संस्तुति, प्रचार और प्रसार किया है। विभिन्न प्रकार की मछलियों को बर्फ में संरक्षित करके उसके जैविक तथा जैव रसायनिक क्रियाओं पर अध्ययन के दौरान यह पाया है कि अधिकतर मछलियाँ 18 से 21 दिन तक बर्फ में संरक्षित की जा सकती हैं।

धूम्रीकरण

वर्ष में कुछ मौसम ऐसे होते हैं जब माँग संग्रहण मांग से अधिक हो जाती है और बची हुई मछलियों की अन्य विधि रूप संरक्षित किया जाना पड़ता। धूम्रीकरण एक सस्ती और संदल पद्धति है जिसके द्वारा मछली को छः महीने तक भी संरक्षित किया जा सकता है। केन्द्र ने धूम्रन के लिए एक धूम्रग्रह का निर्माण किया है जिसमें कम इंधन से अधिक मछलियों का धूम्रन किया जा सकता है।

अन्य मूल्य वर्धित उत्पाद

गुणवर्धित मछलियों की मांग न होने की स्थिति में उन्हें अधिक मूल्य वर्धित उत्पादों में बदल

कर अधिक समय तक संरक्षित किया जा सकता है और अधिक मुनाफा भी कमाया जा सकता है। इन सम्भावनों को ध्यान में रखकर केन्द्र ने मछली का अचार तथा पापड बनाने की विधियाँ भी निर्धारित की हैं।

केन्द्र का प्रचार प्रसार कार्यक्रम

उडीसा में ही नहीं बल्कि केन्द्र ने प्रग्रहण तथा पश्च पैदावार की उलटविधियों का प्रचार-प्रसार भी किया है।

उत्तर-पूर्वी राज्यों के लिए कार्यक्रम

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत केन्द्र ने तीन उत्तर पूर्वी राज्यों-अरुणाचल प्रदेश, असम तथा मेघालय- की मात्स्यकी का अध्ययन करके वहाँ की तकनीकी मांग का निर्धारण किया और इसके साथ-साथ पश्च पैदावार के विभिन्न आयामों पर प्रशिक्षण भी दिया।

बिहार के मधुबनी जिले में कार्यक्रम

कृषि मंत्रालय के आदेशानुसार केन्द्र ने मत्स्य प्रग्रहण तथा मत्स्य पश्च पैदावार के विभिन्न पहलुओं पर प्रशिक्षण एवं प्रदर्शन कार्यक्रम का आयोजन किया जिसको कृषि मंत्रालय ने उत्कृष्ट शब्दों में सराहा है।

प्राचीन भारत में खाद्य वस्तु के रूप में मत्स्य का उपयोग

एम.एम.प्रसाद, जे.के. बन्धोपाध्याय, प्रेम कुमार

उत्तर पाषाण युग से लेकर आर्य काल तक मत्स्य प्रग्रहण तथा उसका खाद्य के रुप में प्रयोग करने के अनेकों प्रमाण इतिहास में मिलते हैं। प्रागैतिहासिक काल में भी मछली एक महत्वपूर्ण खाद्य, खाद्य विनिमय तथा निर्यात का महत्वपूर्ण साधन थी। उक्त समय के अनेक विश्व-भ्रमणकारियों ने मछली को भोजन के रूप में प्रयोग करने के विषय में टिप्पणियाँ की हैं। उनके अनुसार मछली आम जनता का ही भोजन नहीं अपितु राजघरानों में भी बड़े चाव से खायी जाती थी। मछली का आयात और निर्यात क्षेत्रीय लोगों की परम्परा, विश्वास एवं सभ्यता के आदान प्रदान का सघन माध्यम था जो उपमहाद्वीप में अनेकता में एकता की भावना को दर्शाता है।

प्राचीन भारत और मछली:

आधुनिक युग में मत्स्य उद्योग एक मुख्य व्यवसाय के रूप में ऊभर आया है और भारत की आर्थिक स्थिति की रीढ समझी जाने लगी है। आज मत्स्य उद्योग के विभिन्न तकनीकी क्षेत्रों जैसे आधुनिक एवं उत्कृष्ट मत्स्य प्रग्रहण विधियाँ, पश्चपैदावार एवं मत्स्य उत्पन्न, मछली पालन की वैज्ञानिक विधियाँ, मत्स्य रोग एवं निवारण और आनुवंशिक उत्कृष्ट जातियों के शोध से इस उद्योग में अभुतपूर्व क्रान्ति का उदभव हुआ है। इसके कारण आज भारत को प्रतिवर्ष लगभग 6000 करोड की विदेशी मुद्रा का अर्जन होता है। यही नहीं देश के 40 लाख लोग प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से जीविका एवं व्यवसाय के रूप में मत्स्य उद्योग से जुड़े हैं। प्राचीन भारत में मत्स्य आयात-निर्यात विनिमय के माध्यम से लोगों के विचारों का आदान प्रदान, ऐतिहासिक यात्राओं की कथाएँ, विदेशी यात्रियों के भारत के संबध में टिप्पणी और यहां तक कि धार्मिक विचारों की सामंजस्यता को दर्शाता है।

प्रस्तुत लेख का उद्देश्य प्राचीन भारत में मछली का खाद्य के रूप में उपयोग तथा मत्स्य विनिमय की ऐतिहासिकता के आंकड़ों को दर्शाना है।

पूर्व एवं उत्तर आर्यकाल :

उत्तर पाषाण युग में मछली एक लोकप्रिय भोज्य नहीं था क्योंकि उस समय मत्स्य प्रग्रहण की उचित तकनीक उपलब्ध नहीं थी। केवल पत्थर-निर्मित कांटे मछली पकड़ने के प्रयोग में

लाए जाते थे जिससे पर्याप्त मात्रा में प्रग्रहण संभव नहीं था। उस युग के निमज्जकों का समुद्र तथा नदी तटों पर पाया जाना इस का प्रमाण है।

धातु के कांटो का प्रयोग उत्तर पाषाण युग की समाप्ति (धातु युग) पर ही संभव हो सका। उस समय तांबे के बने कांटो का मत्स्य प्रग्रहण के लिए उपयोग किया जाता था। समकालीन कांटो का बिहार और बंगाल में पाया जाना इस तथ्य का प्रमाण है कि यहां के निवासी मछली और चावल पर निर्भर थे। 2500 ईसा पूर्व, अवर दक्षिण तथा दक्षिण विंद्याचल में मछली को खाने में प्रयोग किया जाता था। इसलिए आर्य काल में ही मछली को बहुतायत रूप से खाने के प्रमाण मिलते हैं (अचाया 1994)। कांकसभाई (1904) के अनुसार प्राचीण काल में तमिल मछुवारे (मीनावार) भरनपोषण के लिए समुद्र और नदियों पर निर्भर थे। शास्त्री (1964) के अनुसार पूर्व आर्य काल में मछली बहुत पसंद की जाती थी जिनमे से कुछ मछलियों का उल्लेख पाया जाता है जैसे तमिल में मालावार सोल, *साइनोग्लोसास सेमिफ़ेसिएटस,* को वरल और शुद्धजल कपुर, *वालागो अट्टु,* को वलाई कहते थे। इसके अतिरिक्त झीगां भी मीनाकर द्वारा प्रग्रहण किया जाता था (पिल्लै 1975)।

वैदिक काल में मछली पकडने के लिए कांटा, जाल तथा पिजरों का प्रयोग किया जाता था। वेदों में 250 जन्तुओं का उल्लेख किया गया है जिनमें से 50 को बलि के लिए उपयुक्त माना गया है। आबोयर (1965) के अनुसार कछुवों का मांस तथा अण्डे बहुत पसंद किए जाते थे। धान और दही से भी मत्स्य विनिमय का उल्लेख मिलता है। अर्धशुष्क मछलियों को तलकर खाना बहुत पसन्द किया जाता था (रसनायगम 1926)।

करी और उसका उदभव

तमिल में काली मिर्च को *करी* कहा जाता है और मछली को इसके साथ पकाया जाता था। हालाँकि शताब्दियों बाद अंग्रेजीकृत 'करी' शब्द का उपयोग किसी भी सब्जी, जो मसालों मे बनायी जाती थी, किया जाने लगा। मछली का तमिल शब्द 'मीन' है जो कि संस्कृत मे भी मछली के लिए समावेशित किया गया। लवनशुष्क, अर्धशुष्क, शुष्क या ताजी मछलियाँ जो कि इमली पानी तथा मसालों के साथ पकायी जाती थी। उसको उस समय 'मीनकरी' का नाम दिया गया (पिल्ले 1975 तथा रसनायगम 1926)।

प्राचीन भारत से समुद्री उत्पादों का निर्यात

पहली शताब्दी की तमिल कविताओं में युनानियों के पुष्ट शरीर, अनजानी भाषा और बाढ के समय मजबुत नौका से साहसिक विचरण का उल्लेख मिलता है जिसका रोमन शोध भी सही ठहरते हैं। सन 40 में एक युनानी नाविक हिप्पोलो ने पश्चिम से भारत आने का एक मनसूनी

हवा का पता लगाया। उस समय भारत और रोम का आयात-निर्यात चरम सीमा पर था। इसका उल्लेख पहली शताब्दी में लिखी गयी युनानी प्रसिद्ध पुस्तक "पेरीप्लस मारिस एरीथरी" में मिलता है। इस पुस्तक में दक्षिण भारत के बन्दरगाहों में व्यापार विनिमय की प्रारम्भिक जानकारियों का उल्लेख है (पनिकर 1945)। पचास साल बाद प्रसिद्ध लेखक टोलेमी ने भारत के 11 बन्दरगाहों और 30 कस्बों का उल्लेख किया और बाद में और अधिक बन्दरगाहों को व्यापार विनिमय की प्रारम्भिक जानकारीयों का उल्लेख है (पनिकर 1945)। अधिक मात्रा में नमक उत्पाद के कारण दक्षिण भारत नमक व्यापार का मुख्य केन्द्र था। यहाँ नमक का व्यापार पूरे परिवार के साथ बैल गाड़ियों (तमिल शब्द वन्डिचाडु) से किया जाता था जिसका उल्लेख एक तमिल पुस्तक, 'पाटिनापाले' में किया गया है, जो कि 3 से 4 ईसा बाद लिखी गयी। रास्ते से गुजरते हुए इन बैल गाड़ियों की गिनती लेना बच्चियों का एक मजेदार खेल था (अचाया 1994)। खाना पकाने में ही नहीं बल्कि मछली और मांस के परिरक्षण में नमक का प्रयोग प्रचलित था (शास्त्री 1964)। निर्यात के लिए अन्य खाद्य पदार्थों के साथ लवणशुष्क मछली का सुसज्जित जहाजों में लदा होने का विवरण एक तमिल कवि (मनकुरि मरुदनार) की सन 450 में लिखी गयी कविता में मिलता है।

विश्व भ्रमणकारियों की टीका-टिप्पणियाँ

डोरियस ने 510 ईसापूर्व साइलेक्स को लालसागर तथा सिंधु नदी से होते हुए पेशवार भेजा जिसकी टिप्पणियों का हिरोडोटस नामक युनानी लेखक (484-431 ईशापूर्व) द्वारा रचित चिरस्मरणीय पुस्तक 'हिस्टोरिका' में सभ्यसमाज द्वारा कच्ची मछली खाने का उल्लेख किया है (पुरी 1939)। फ्लेवियस ऐरीनस (96-180) ईस) ने अपनी पुस्तक 'ऐनाबेसिस ऑफ ऐलेक्सेन्डर' में सिकन्दर की सेना की वापसी का वर्णन किया है जिसमें लगभग 2000 नावें थीं। सिकन्दर ने खाड़ी में खारे पानी की बड़ी-बड़ी मछलियां देखी जो उसने यूनान में कभी नहीं देखी थी। मेगस्थनीज ने चन्द्रगुप्त मौर्य के राज्य में उद्यान का वर्णन किया है। उसके शब्दों में "उद्यान दीवारों से घिरा था, उद्यान में सुन्दर सजावटी बृक्ष, पालतू मोर तथा पवित्र मछलियों का तालाब था।" कोबेल (1953) के अनुसार चीनी यात्री ह्वेन स्वांग ने सन 629 से 645 तक भारत के 138 में से 110 रजवाडों का दौरा किया और उसने खाने में मीठेपानी तथा खारेपानी की मछलियों के उपयोग के बारे में भी लिखा। ईबू होकल (950) नामक एक अरब भूगोलशास्त्री ने लिखा है कि गंगा नदी के किनारे बसे जाट समुदाय मछली और जलमुर्गी खाना पसन्द करते थे। अल-बरूनी 1017 से 1030 तक भारत में रहा और उसने अपने ग्रंथ 'किताब-ऊल-हिन्द' में अन्य भोज्य पदार्थों के साथ मछली सेवन का वर्णन किया है। मोरक्को निवासी अल-ईदरीशी ने पूरे यूरोप और भारत का भ्रमण किया और उसने लिखा कि सिन्धु घाटी में मछलियाँ बहुतायत

पायी जाती थीं और बहुत सस्ती थीं। अमीर खुसरो (1253-1325) ने मछली को मुस्लिम खाने का मुख्य व्यंजन बताया। तवेगरी एवं स्पिलमैन (1989) के अनुसार फादर मिनिटिलस (1923) का कहना है कि कालीकट के 12000 मुसलमान, कुरान शरीफ़ और सुन्ना में मोहम्मद साहब द्वारा बताये गये निर्देश के अनुसार मछली को बिना हालाल किये खा सकते थे। लूडोविको द वरतेमा (1505-1508) ने विजयनगर प्रवास के दौरान यह अनुभव किया कि कालीकट में ब्राहमण समाज में यदि कोई मछली खाता तो उसे समाज बहिष्कृत कर दिया जाता था। परन्तु नायर समुदाय में मछली तथा मांस खाने का प्रचलन था। पुर्तगाली भ्रमणकारी फेरनाओ नूनीज (1535) ने विजयनगर साम्राज्य की यात्रा के दौरान विजयनगर निवासियों के खान-पान के विषय में कहा है कि यहां के निवासियों को व्यंजन की पूर्णतया ताजगी महत्वपूर्ण थी। यह कथन विशेषतया शिकार के बारे में कहा गया है। उस समय वहां की नदियों में मछलियां बहुतायत पायी जाती थीं। भारत में ब्रिटिस राजदूत सर थोमस ने मुगल शाही परिवार के खान-पान के बारे में लिखा है। 'शाही भोजन में 20 से 50 तक व्यंजन परोसे जाते थे'। उन्होने शोषण के बारे में लिखा है कि भारत में निम्न वर्ग से मध्यम वर्ग, मध्यम वर्ग से उच्च वर्ग तथा उच्च वर्ग से शाही वर्ग द्वारा इसी प्रकार शोषण होता था, जैसे समुद्र में बड़ी मछलियां छोटी मछलियों को खा जाती हैं (चौपड़ा 1963)। अनेक यात्रियों द्वारा शोषित किसानों की कठिनाइयों को उजागर किया (अचाया 1994)। नानपोरिया (1989) के अनुसार एदवर्ड लियर (1874) जो कि अपनी सजीव पंचपंक्ति कवितायें यानि लिमेरिक के लिए प्रसिद्ध है। अपने भारत-भ्रमण के दौरान उन्होंने लिखा कि उनके जलपान में उबले झींगे, झींगा तरकारी, ठंडा गोश्त तथा मक्खनीरोटी परोसे जाते थे।

राजकीय भोजन मे मत्स्य

वर्तमान बिदार जिला जो हैदराबाद से 160 किमी. दूर है पुराने समय में यह कल्याण राज्य के नाम से जाना जाता था। सोमेश्वर तृतीय (1126-1138) यहाँ के शासक थे उनको भुना कछुवा, तड्की मछली तथा तले केकडे बहुत पसन्द थे। 'समरईछाकहा' में रोहू मछली पकाने के निर्देश दिये गये हैं। मछली की खाल उतारकर नमक और हिंग का लेप लगाकर हल्दीपानी में डुबोकर तला जाये। यह व्यंजन शाकाहारियों की परेशानी का कारण था क्योंकि इसमें और शाकाहारी व्यांजन में ज्यादा अन्तर नहीं था। मुगल सम्राट बाबर को भारतीय खाना बिल्कुल पसद नहीं था। वह खरबूजा तथा शुष्क मेवा ही खाता था। परन्तु भारतीय मछली उसे बहुत पसंद थी क्योंकि इसमें न तो दुर्गन्ध थी और कांटे न होने के कारण इसे खाने में भी परेशानी नहीं होती थी।

मछली एक खाद्य - क्षेत्रीय सामान्यताएँ

कश्मीरः कश्मीर एक नागा शब्द है। जिसका अर्थ ऋषि कश्यप के वंशजों का निवास है। बाद में ये नागा वैदिक काल में आर्य सभ्यता में घुल मिल गये और उन्हें पवित्र नदी सरस्वती के नाम पर उनको सारस्वत कहा जाता है। सारस्वत ब्राह्मण आज भी हेरट उत्सव में मछली और मांस का सेवन करते हैं (हासनैन 1980)। दास (1980) और अग्रवाल (1984) के अनुसार नीलकंठ पुराण (550-650) तथा कल्हन की राजतरंगिणि (1200) में मछली को काश्मीरी लोगों के मुख्य व्यंजन बताया गया है। जाफ़री (1985) के अनुसार कमल ककडी को मांस मछली और हरी सब्जी के साथ भुरता बनाकर या उसको चावल के घोल में डालकर उसे सघन रूप से तल दिया जाता है जो कि अभी भी काश्मीरियों का एक प्रिय भोजन है।

गोवाः गोवा में ब्रिटिश साम्राज्य के समय हल्दी के साथ बनायी गयी मछली की पीली तरकारी को 'कलादीन' कहा जाता था (फर्नानडीज 1977)। हलका नमकीन शीर मछली के अण्डों को तलकर खाना उनका अति प्रिय जलपान है। गोवा में झींगा, सिरका तथा प्याज को मिलाकर कांच के जार में संरक्षित किया जाता है जो स्वाद में खट्टा मीठा होता है। इस व्यंजन को 'झींगा बलकाओ' कहते हैं।

पांडीचेरीः पांडीचेरी पर चार शताब्दियों तक फ्राँसिसियों ने राज्य किया। उसका प्रभाव आज भी यहां देखा जा सकता है। मछली को उष्ण वाष्पित करके उसे चटनी तथा लहसुन की लुगदी के साथ खाया जाता है। मछली का मुरता बनाकर अण्डे के साथ फेंटकर उसे सेंक दिया जाता है।

कर्नाटकः अचाया (1994) के अनुसार दक्षिण कर्नाटक में कोडागु जिले के पर्वतीय क्षेत्रों की लडाकू कोड़वा जनजाति की अद्वितिय व्यंजन की अलग पहचान है। इस जनजाति के लोग माथी मीन (सारडीन) और कोइली मीन (वाइट बेट) के व्यंजनों के बहुत पसंद करते हैं।

हैदराबादः हैदराबाद शहर की स्थापना सन 1589 में मोहम्मद कुली कुतुब शाह ने की। उस समय छीछडों से बना 'चखा' खाने का प्रचलन था। यह इस बात का द्योतक है कि बेकार चीजों का समुचित उपयोग कैसे किया जाये।

केरलः मीठे पानी की मछली से बना 'मीन वेविच्चत्' केरल के त्रिचूर से लेकर कोट्टयम तक बडे चाव से खाया जाता है। कोट्टयम में इस व्यंजन को पकाने में कोकम का छिलका, मिर्च तथा रंजक पदार्थों का उपयोग करते हैं। परन्तु त्रिचूर क्षेत्र में यही व्यंजन कच्चे आम तथा नारियल के रस में पकाया जाता है। छोटी मछलियों जैसे सारडीन या झींगा को नारियल के बुरादे में पकाया जाता है जिसे 'मीन वट्टिच्चत्' कहते है (अचाया 1994)। जैफ़री (1985) के अनुसार केरल के थिया लोग मछली और अप्पम नाश्ते में बहुत पसन्द करते हैं।

उडीसा: 'डालिम्ब कुमार कथा' (1200) में राघव मछली के उच्च पोषक तत्वों का वर्णन मिलता है। उस समय के शिलालेखों में मछली तथा अन्य जानवरों के शिकार के अधिकारों का वर्णन है। शंकरदेव द्वारा रचित श्रीराम भागवत में इस क्षेत्र में खमीरे चावल को बैंगन और मछली से खाने का उल्लेख किया गया है (साहा 1976)।

बंगाल: पाण्डे (1965) के अनुसार अंग्रेज लेखक वर्नियर (1600) ने बंगाल की समृद्धि इन शब्दों में व्यक्त की है कि "बंगाल में खाने की सभी आवश्यक वस्तुएँ, चावल, गेहूँ, सब्जी, बत्तख, बकरी, भेड, सुअर तथा विभिन्न प्रकार की ताज़ा एवं लवण शुष्क मछलियों से समृद्ध है"। अचाया (1994) के अनुसार बंगाल में खाद्य समृद्धि के कारण पुर्तगाली, अंग्रेजी और डच शब्दभंडार में इस प्रकार एक कहावत है, "बंगाल जाने के सौ रास्ते हैं लेकिन वापिस आने का एक भी नहीं"। मजूमदार (1943) के अनुसार बंगला ब्राहमण, याज्ञवल्क्य, मनु तथा व्यास के कथनानुसार मछली खा सकते थे। भट्ट भावदेव (11-12 शताब्दी) नामक एक प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ ने कहा कि कुछ पवित्र दिनों को छोड़कर मछली-मांस खा सकते है। अचाया (1994) के अनुसार ब्रह्मधर्म पुराण में सफ़ेद मांस वाली मछलियों, जैसे रोहू, सील और सिंघाडा को खाने की संस्तुति की गयी है। श्रीनाथाचार्य ने भी कहा है कि कुछ पवित्र तिथियों को छोडकर बंगला ब्राहमण मछली खा सकते हैं। महान आध्यात्मिक पुरूष रामकृषण परमहंस (1822) ने कहा कि 'मैं कोई भी मत्स्य-व्यंजन पसंद करता हूं'। स्वामी विवेकानन्द 'माछेर शुक्तो', 'माछेर झोल', मछली की खट्टी तरकारी, मीठी दही तथा संदेश बहुत चाव से खाते थे। अचाया (1994) के अनुसार कर्नाटक में गौड़ा ब्राहमण मछली खाते हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि बंगाल (गौड) से विस्थापन के बाद भी वे मछली खाने की आदत छोड न सके। पूर्व बंगाल (वर्तमान बांगलादेश) और पश्चिम बंगाल में मछली खाने की प्राथमिकता में अन्तर है। पूर्व बंगाली नदी की मछली तथा पश्चिम बंगाली तालाब की मछलियाँ जैसे मागुर तथा तोपसे को पसंद करते हैं परन्तु हिलसा दोनो क्षेत्रों में बहुत प्रिय है।

असम: चौधरी (1959) के अनुसार असम में योगिनि यात्रा, कालिका पुराण और कुलवनव के आधार पर 'कामरूप यात्रा' का संकलन हुआ। उसके अनुसार उच्च वर्ग को शल्क रहित तथा सर्प समान मछली खाना निषेध था। परन्तु बाद में रचित 'कुमार-हरण' ग्रन्थ में मछली और केले के थोर के व्यंजनों का उल्लेख है।

निष्कर्ष: प्रस्तुत लेख का उद्देश्य प्राचीन भारत में मछली को खाद्य के रूप में अपनाना, मत्स्य विनिमय, मछली के देश-विदेश में निर्यात तथा मत्स्य व्यवसाय से क्षेत्रीय तथा विदेशी बोली, विचार तथा मान्यताओं के आदान-प्रदान को दर्शाना है। मांस खाने से हृदय रोग होने का भय भी रहता है। यह मत्स्य में नहीं है क्योंकि वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर मछली एक आदर्श भोजन है। किसी भी वैज्ञानिक शोध के लिए इतिहास आवश्यक है। इस प्रपत्र का उद्देश्य ऐतिहासिक आंकडो को एकत्र करना था।

मात्स्यकी प्रसार और मानव संसाधन

रवि कुमार

सरल भाषा में किसी भी तकनीकी व उसका विश्लेषण, जो मछुवारों व किसानों को अच्छी तरह समझ में आ सके, जिसके द्वारा वे नवीनतम तकनीकियों का प्रयोग करके उससे लाभान्वित हो सकें और आनेवाली समस्याओं का पूर्वानुमान लगा कर सामना कर सके, सही मायनें में यही मात्स्यकी प्रसार है तथा मानव संसाधन विकास (उत्पन्नता) का चरण है।

राष्ट्रीय विकास में मात्स्यकी शिक्षा अहम भूमिका निभाती है। हमें ज्ञात है कि भारत वर्ष की तटीय रेखा लगभग 8041 कि.मी. है तथा उसका 50,40,00 वर्ग कि.मी. क्षेत्रफल महाद्वीप द्वारा धिरा हुआ है। भारतवर्ष में नदियों का कुल क्षेत्रफल 31.2 लाख वर्ग कि.मी. है साथ ही जलाशायों का कुल क्षेत्रफल 20.50 लाख हेक्टेयर आँका गया है। उत्पादन के दृष्टिकोण से समुद्रीय एवं स्थलीय मत्स्य उत्पादन क्रमशः 3.9 व 4.5 मिलियन टन प्रतिवर्ष है। देश में मछुवारों की कुल संख्या लगभग 59.5 लाख आंकी गयी है। उपलब्ध आंकडों द्वारा मत्स्य उत्पादन वर्ष 1980-81 के दौरान 2.4 मिलियन टन से बढ़कर 1995-96 में 4.95 मिलियन टन हो गया था। सातवीं पचवर्षीय योजना (1984-85) से (1989-90) के तहत मत्स्य उत्पादन की औसत वार्षिक वृद्धि दर 6.5% रही। साथ ही पिछले पचास वर्षों के आंकडों के अनुसार मत्स्य उत्पादन दर 11.4% रही जबकि कृषि क्षेत्र में उत्पादन दर 4.0% रही। उपरोक्त आंकडों से यह सिद्ध होता है कि मात्स्यकी राष्ट्रीय निर्माण (रोजगार उत्पादन व निर्यात) में अहम भूमिका अदा कर रही है। अतः मात्स्यकी को राष्ट्रीय नीति में भी महत्वपूर्ण स्थान दिया जा रहा है। इसको ध्यान में रखते हुए मात्स्यकी विकास व उसके उत्पादन को और भी बढ़ाया जा सकता है। समुद्रीय क्षेत्र में इसका उत्पादन बढ़ाने केलिए राष्ट्रीय लक्ष्य एवं नीति गहरे समुद्री मत्स्यन (Deep Sea Fishing) के तरीकों को बढ़ावा देने के सुझाव देती है। उसी प्रकार अंतस्थलीय मत्स्य उत्पादन को बढ़ाने के लिए ज्यादा जलीय क्षेत्रों को आधुनिक मत्स्यपालन पद्धति के अंतर्गत लाना पड़ेगा। उपरोक्त दोनों लक्ष्यों में प्राप्ति के लिऐ मात्स्यकी की अन्य वैज्ञानिक तकनीकियो व विज्ञान के साथ साथ प्रसार विज्ञान को भी अपना ध्यान इसी ओर देना पड़ेगा। अतएव मात्स्यकी की प्रसार-शिक्षा हेतु सर्वप्रथम लक्ष्य यह है कि आधुनिक विकास को आम जनता एवं मछली पालको तक उपयुक्त जानकारी पहुंचाना व शिक्षित उद्यमियों के माध्यम से

मत्स्य के उत्पादन को बढाना है।

अतः शिक्षा प्रणाली व उपयुक्त पाठ्यक्रम की एक अहम भूमिका है। तथास्तु, पाठ्यक्रम में उन जानकारियों और व्यावहारिक ज्ञान को एक साथ एकत्र किया जाना चाहिए जिसे अपनाकर विद्यार्थी/उद्यमी अपने कार्यक्षेत्र में कुशलता से कर्तव्य निर्वहण कर सकें।

मात्स्यकी प्रसार हेतु प्रस्तावित पाठ्यक्रम व विषय

राष्ट्रीयनीति एवं लक्ष्य-कार्यक्षेत्र व कर्तव्य-साथ ही ज्ञान, कौशल, अभिरुचि व अभ्यास, उपरोक्त तथ्यों पर उपयुक्त पाठ्यक्रम।

इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु प्रसार शिक्षा की तकनीकी हस्तांरण विधियों पर विशेष ध्यान देना अति आवश्यक है। बृहत् स्तर पर तकनीकी विद्या को लागू करने के लिए, निम्न तीन पहलुओं को शामिल करना अत्यंत आवश्यक है।

प्रथम - तकनीकी हस्तांतरण विधियों का ज्ञान।

द्वितीय - तकनीकियों के प्रबंध एवं व्यवस्था की संपूर्ण जानकारी।

तृतीय - तकनीकी हस्तांतरण नीति एवं शोध स्तरों पर विभाजन। साथ ही स्नातक स्तर पर तकनीकी हस्तांतरण विधियों के ज्ञान एवं कौशल पर विशेष ध्यान।

इसके अतिरिक्त इस स्तर को विद्यार्थियों को प्रबंध व्यवस्था का ज्ञान होना अति आवश्यक है। इस स्तर से उत्तीर्ण होनेवाले विद्यार्थी से यह उम्मीद की जा सकती है कि किसी भी व्यवसायिक मत्स्य पालन-योजना का प्रबंध भी संभाल सके। अतएव व्यवसायिक मत्स्य उत्पादन पर भी स्नातकोत्तर ज्ञान होना आवश्यक है।

विभिन्न विश्वविद्यालयों में मात्स्यिकी प्रसार शिक्षा का वर्तमान स्तर

विश्वविद्यालयी स्तर	मात्स्यिकी प्रसार शिक्षा के स्तर उपलब्धियां	छात्रों के ज्ञान कौशल और अभिरुचियों से अनुमानित
1. स्नातक स्तर	(क) तकनीकी हस्तांतरण विधियों का ज्ञान (ख) मछुआरों के सामाजिक एवं अर्थिक स्थिति का ज्ञान	(क) तकनीकी हस्तांतरण ज्ञान ज्ञान व कौशल में सम्पन्नता। (ख) मछुआरों की परिस्थितियों की जानकारी
2. स्नातकोत्तर स्तर	(क) तकनीकी हस्तांतरण विधियों के प्रबंध व्यवस्था का ज्ञान	(क) प्रबंध व्यवस्था और उनकी प्रसार व्यवस्था पर उपयुक्त

			ज्ञान/निष्ठता।
	(ख) उद्यमिता विकास पद्धति का ज्ञान।	(ख)	उद्यमिता विकास पद्धति एवं इसका मात्स्यिकी उद्यमिता विकास में प्रयोग की क्षमता।
	(ग) व्यवसायिक मत्स्य उत्पादन पर परियोजना निर्माण रिपोर्ट।	(ग)	व्यवसायिक मत्स्य उत्पादन पर परियोजना निर्माण या निरीक्षण की क्षमता।
3. शोर्ध कार्य	(क) तकनीकी हस्तांतरण नीति एवं कार्यक्रम विश्लेषण।		
	(ख) मानव संसाधन विकास एवं जन संचार तकनीकी का ज्ञान।		
	(ग) सृजनात्मक शोध कार्यक्रम।		

छात्र उद्यमी को इस बात का भी ज्ञान होना आवश्यक है कि किस प्रकार व्यवसायिक मत्स्य उत्पादन शुरु करवाना है। अतएवं व्यवसायिक मत्स्य उत्पादन के परियोजना-निर्माण पर एक रिपोर्ट तैयार करने की क्षमता पैदा करनी चाहिए, जिससे भविष्य में वह हर तरह के परियोजना-निर्माण का निरीक्षण कर सके। शोध स्तर के विद्यार्थियों से समाज, राष्ट्रीय नीति, मानव संसाधन विकास, जनसंचार तकनीकी इत्यादि विषयों में योगदान की। उम्मीद होनी चाहिए। अतएव इस स्तर पर पाठ्यक्रम ऐसा का होना चाहिए जिससे विद्यार्थी इन पहलुओं पर अपना ध्यान दे सके। इसके अतिरिक्त इसमें मात्स्यिकी प्रसार शिक्षा को सृजनात्मक शोध करने की क्षमता का होना भी आवश्यक है।

उपरोक्त तथ्य को ध्यान में रखते हुए विश्वविद्यालय अपने विशेषज्ञों की परिसीमा के अनुसार मात्स्यिकी प्रसार शिक्षा का पाठ्यक्रम निर्माण निम्नानुसार कर सकते हैं।

विश्वविद्यालयी स्तर	**प्रसार शिक्षा का पाठ्यक्रम**	**(थ्योरी एवं प्रेक्टिकल) लिखित एवं प्रयोगात्मक**
1. स्नातक	1. मात्स्यिकी प्रसार शिक्षा	(लिखित थ्योरी)
	2. प्रसार शिक्षा की परिभाषा एवं दर्शन।	"
	3. प्रसार सम्पर्क पद्धतियां जैसे एकल सम्पर्क समूह सम्पर्क एवं समुदाय/जन सम्पर्क पद्धतियां।	लिखित एवं प्रयोगात्मक

	4.	मछुआरों की सामाजिक एवं आर्थिक दशा।	"
	5.	समूह सम्बोधन।	"
	6.	प्रसार प्रकारण/निर्माण।	"
2. स्नातकोत्तर: मुख्य ()	1.	प्रसार शिक्षा का विश्व इतिहास	लिखित (थ्योरी)
	2.	प्रबन्ध व्यवस्था	"
	3.	उद्यमिता विकास	"
	4.	व्यवसायिक मत्स्य पालन पर परियोजना निर्माण	लिखित एवं प्रयोगात्मक (थ्योरी एवं प्राक्टिकल)
	5.	जनसंचार	"
माइनर (गौण)	1.	एक्वा कल्चर	(थ्योरी एवं प्राक्टिकल)
3. शोध: मेजर (मुख्य) (सामुद्रिक व अन्तरस्थलीय)	1.	मात्स्यिकी संबध कानून	(थ्योरी)
	2.	मात्स्यिकी विकास हेतु राष्ट्रीय नीति एवं कार्यक्रमों पर सृजनात्मक टिप्पणी	(थ्योरी, प्राक्टिकल व एसाइनमेन्ट लिखित, प्रयोग व प्रयोगात्मक)
	3.	मानव संसाधन विकास	"
	4.	आधुनिक संचारतंत्र	"
	5.	सजनात्मक शोध कार्यक्रम	"
माइनर (गौण) सामुद्रिक व अन्तस्थलीय	1.	एक्वाकल्चर	"
	2.	अर्थशास्त्र	"
	3.	सांख्यिकी	"

स्क्वालीन-स्रोत एवं अनुप्रयोग

के.जी. रामचन्द्रन नायर

स्क्वालीन एक उच्च असंतृप्त अलीफ टीक हाईड्रोकार्बन है जो प्रकृति में व्याप्त है। यद्यपि बहुत ही छोटी मात्रा में कई वनस्पती तेलों में यह उपस्थित है फिर भी इसका प्रमुख स्रोत शार्क की कुछ जातियों का कलेजा है। रासायनिक रूप में यह 2, 6, 10, 15, 19, 20 हेक्सामीथैल 2, 6, 10, 14, 18, 22 टेट्राकोसाहेक्सेन है। यह छः आईसोप्रीन यूनिट से युक्त आईसोप्रिनोईड घटक है।

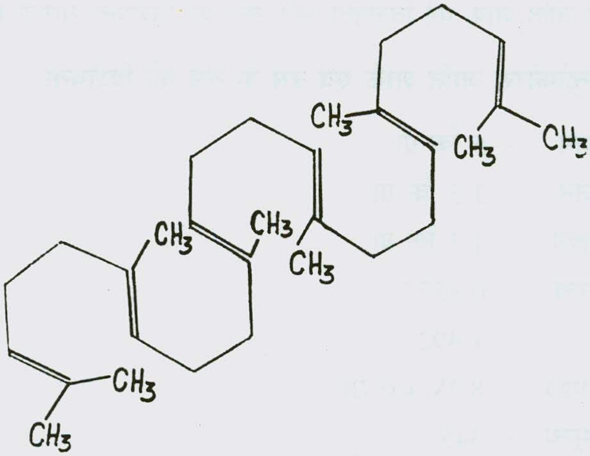

स्क्वालीन - संरचना

अन्य नामः

1. 2, 6, 10, 14, 18, 22 हेक्सामीथैल टेट्राकोसाहेक्सेन
2. स्फीनासीन
3. सप्रैन

संरचना

शार्क, सेन्ट्रोफोरम जाति, जो 600-1000 मी. गहरे पानी में रहता है उन्नत मात्रा के स्क्वालीन युक्त यकृत के लिए ख्यात है। स्क्वालीन युक्त मुख्य शार्क जातियों में उपस्थित स्क्वालीन का वितरण और मात्रा **सारणी 1** में प्रस्तुत है।

सारणीः I प्रमुख शार्क जातियों में स्क्वालीन उनके यकृत तेलों में उपस्थित है।

जातियाँ	% के असाबुनीकरणीय
शार्ट स्पाइन स्फूर डॉग (स्क्वालस मिट्सकुरी)	87-90
लीफ स्केल कल्चर शार्क (सेन्ट्रोफोरस स्क्वमोसस)	70-85
निडिल डॉग मत्स्य (सेन्ट्रोफोरस एस्ट्रोमरजीनटस)	58-60
बास्किंग शार्क (सेन्ट्रोफोरस मक्सीमस)	22-55

सेन्ट्रोफोरस जाति शार्क की विशेषता और तेल की विशेषता सारणी-II में दी गयी है।

सारणी - II सेन्ट्रोफोरस जाति शार्क एवं उस के तेल की विशेषता

मत्स्य का वज़न	- 5 कि ग्रा
यकृत का वज़न	- 1.5 कि ग्रा
तेल का उत्पादन	- 1.3 कि ग्रा
आपेक्षिक घनत्व	- 0.8577
अपवर्तनांक	- 1.492
रंग (लोवीबॉण्ड)	- 8.7V + 0.7R
आईओडीन मूल्य	- 345
साबुनीकरण मूल्य	- 28
असाबुनीकरण मूल्य	- 85
विटामिन A	- शून्य
स्क्वालीन	- 80% असाबुनीकरण का पदार्थ

स्क्वालीन का अंगराग और रासायनिक अनुप्रयोग

मनुष्य के वसामय स्राव में कोलस्ट्रॉल के पूर्वगामी के रूप में पाये जाने पर और उसके संभाव्य कर्कटरोगजनकरोधी प्रभाव जानने पर, स्क्वालीन की त्वचाविज्ञानीय विशेषताओं, औषधीय और अंगराग संबंधी अध्ययन पर और ज़ोर दिया गया। यह सतह लिपिड का मुख्य हाईट्रोकार्बन है जो कुल सतह वसा का 11 प्रतिशत तक है। इस की उपस्थिति त्वचीय पुटी,

कर्णमल, बाल वसा और त्वग्वसा में रिपोर्ट किया गया है।

बाल और बाल हीन त्वचा के लिए त्वग्वसा सामान्य स्नेहन उपलब्ध कराता है। यह त्वचा को सुनम्य रखता है और त्वचा पर परिरक्षी जीवाणु और प्रति कवक का आवरण सा बन जाता है। यह वसा आवरण त्वचा सतह पर नमी रखने में सहायक है। मानव त्वग्वसा में स्क्वालीन स्वाभाविक रूप में प्राप्त होता है जो निम्नानुसार पाया जाता है। मानव त्वग्वसा का औसत संयोजन नीचे दिया गया है।

मुक्त वसा अम्ल	-	5%
ग्लिसराइडस	-	50%
मोम	-	20%
स्क्वालीन	-	10%
अन्य हाईड्रोकार्बन	-	5%
कोलस्ट्रोल इस्टर	-	4%
कोलस्ट्रोल (मुक्त)	-	1%
अन्य स्टेरॉल	-	1%
अन्य	-	4%

रोग लक्षण अनुप्रयोग

स्क्वालीन संरचना बीटा करोटीन के समान है, जो कोलस्ट्रोल के संश्लेषण में मध्यवर्ती उपापचयी भी है। अनुप्रयोग करने पर यह कम सघनता के लिपो-प्रोटीन के सहयोग के साथ सीरम के ज़रिए मनुष्य के ऊतकों में वितरित होता है और त्वचा पर अधिक केन्द्रीकृत होता है जहाँ वह त्वचा के सतह लिपिड़ के एक मुख्य घटक बन जाता है। जन्तुओं को स्क्वालीन युक्त आहार देने से कोलेस्ट्रॉल और ट्राइग्लिसराइड स्तर कम हो जाता है। मनुष्य के सन्दर्भ में, कोलस्ट्रॉल को कम करनेवाले कुछ औषधों के प्रभाव को लाभदायक अन्तःशक्ति प्रदान करने में यह स्क्वालीन सक्षम है। हाइपकोलस्टरोलिमिया को नियंत्रित रखने के लिए पथ्य आहार के लिए आजकल स्क्वालीन को गोलियों के रूप में विपणन किया जाता है।

स्टैफिलोकॉकी खाद्य विषाक्तन

संजीव एस.

स्टैफिलोकॉकस औरस के कुछ स्ट्रेन्स की पैदावार के दौरान खाद्य में एन्टेरोटोक्सीन के अन्तग्रहण से सामान्यतः खाद्य विषाक्त होता है। स्टैफिली एक ग्रीक शब्द है, जिसका अर्थ है अंगूर का गुच्छा और कोकस का अर्थ है दाना या बदरी। खाद्य विषाक्तन से स्टैफिलोकॉकै का पहला रिपोर्ट संभवतः वॉगन एवं स्टेन्बर्ग (डाक 1949) का है जो कि 1884 में है। उन्होंने स्टैफिलोकॉकै से संदूषित पनीर के खाने से मिचीगन में बड़ी मात्रा में उत्पन्न बीमारी के अन्वेषण के दौरान रिपोर्ट किया था। टोक्सीन को एन्टेरोटोक्सीन कहा गया है क्यों कि यह आँत क्षेत्र के अस्तर को गैसट्रो इन्टरीसीस या सूजन उत्पन्न करता है।

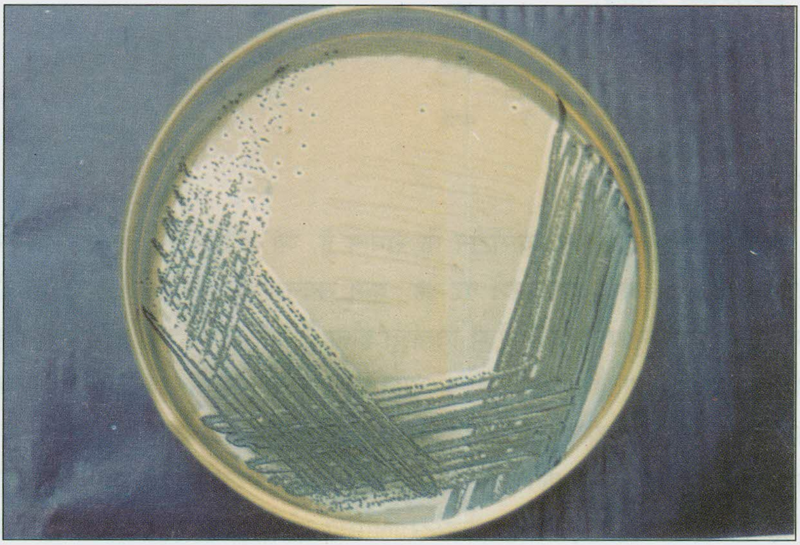

Staphylococcus aureus on BP agar.

जीव

स्टैफिलोकोकस औरस एक छोटा (व्यास में 0.5-1), गोल, ग्रैम-पॉजिटिव, गतिशीलहीन जीव है। अंगूर का गुच्छा जैसा या जोड़ी में और छोटी जंजीर जैसी कोशिकाओं के प्ररूपी आकार के अनियमित गुच्छा है। सामान्यतः खर माध्यम में वृद्धि सुनहरे या पीले रंग में होती है

मगर कुछ स्ट्रेन बिना रंजित भी मिल सकते हैं। यह विकल्पी वातानिरपेक्ष जीव है करीब 37°C के अनुकुलतम वृद्धि तापमान में वायु की उपस्थिति में अच्छी वृद्धि को दिखाता है और 10°C तक या उससे कुछ कम तापमान में भी बढ़ने में समर्थ है। एस. औरस (aw 0.86 अल्पतम) अल्प जल प्रतिक्रिया स्तर तक सहन क्षमता रखता है और इसलिए यह उच्च लवण सान्द्रण स्तर में अच्छी तरह बढ़ता है।

स्टैफिलोकोकै सर्वगत जीव है। फिर भी प्राणी एवं मनुष्य शरीर उसके मुख्य आधार है। वे वायु, जल, दूध मलजल और इन पदार्थों से मिलने वाली सभी वस्तुएं और मनुष्य शरीर में पाये जाते हैं। जन्तुओं में स्टैफिलोकॉकै का मुख्य स्थान नाक है। 30-50% मनुष्य इन जीवों के वाहक है। वे स्वस्थ मनुष्य के कंठ एवं त्वचा में पाये जाते हैं।

सभी एस. औरस स्ट्रैन्स स्कंद - धनात्मक है (यानी एन्ज़ाइम स्कंदित रक्त प्लाविका जैसा लगता) और करीब 80% के मानव मूल के स्ट्रैन्स एक या ज्यादा स्टैफिलो-एन्टेरीटोक्सीन उत्पन्न करने में सक्षम है। जब यह जीवाणु खाद्य में अधिक स्तर 10^5/ग्रा एन्टेरोटोक्सीन की मात्रा के निर्माण के साथ अनुकूल होता है स्कंद - नकारात्मक स्टैफिलोकॉकस से खाद्य विषाक्तन का उत्पन्न होना विरल है। एस. इपीडरमीडीस एवं एस. सप्रोफीटीकस बीमारियों को मनुष्य एवं जन्तुओं में उत्पन्न करने में स्कंद - नकारात्मक स्टैफिलासेकॉकस मुख्य माना गया है।

आठ एन्टेरोटोक्सीन - A, B, C1, C2, D E, F और G के रूप में जाने जाते हैं। एन्टेरोटोक्सीन A और D सामान्यतः खाद्य विषाक्तन में सम्मिलित है। एन्टेरोटोक्सीन एक्सोटोक्सीन है, तथाकथित होने के कारण वे अंखड कोशिका में उत्पन्न होते हैं और खाद्य या संवर्धन मीडीया में रिहा होते हैं।

खाद्य के आधार पर इसकी बढत एवं टोक्सीन उत्पादन के लिए तापमान रेंज 4 से 46°C तक है। कस्टर्ड एवं संघनित दूध के लिए अल्पतम तापमान करीब 6.7 से 7.8°C है। मगर यह गऊ हृदय निषेचन एवं सुखाये मांस सलाद में 10°C से ज्यादा है। इस अल्पतम तापमान में बढ़त बहुत कम है और टोक्सीन के खोज-स्तर के उत्पादन के लिए संख्या प्राप्ति का समय ज्यादा है। वातापेक्षी परिस्थिति में मांस में अल्पतम तापमान 4.8 pH है और वातनिरपेक्ष में करीब 5.5 है, जबकि अधिकतम pH के लिए बढ़त करीब 8.0 है। वातापेक्षी परिस्थिति के अधीन अल्पतम aw करीब 0.86 है और वातनिरपेक्ष की परिस्थिति के अधीन 0.90 है।

अन्य खाद्य जीवाणु स्टैफिलोकॉकै के साथ मुकाबला करते हैं। टोक्सीन के उत्पादन के अवरोध एवं रोक से उसकी बढ़त को रोकता है या बिगाड़ जीवाणु हानिकारक होने से पहले खाद्य को अखाद्य बनाते हैं। खाद्य में सामान्य स्टैफिलोकॉकै छोटी मात्रा में प्रवेश करता है और

कच्चे खाद्य में भाग लेने वाले जीवाणु से ज्यादा मात्रा में होती है। यह प्रतिस्पर्द्धा गरम खाद्य में उत्पन्न नहीं होती और स्टेफिलोकॉके की अनर्गल बढ़त होती है। प्रति मी ली या ग्राम में एक मिलीयन स्टैफिलोकॉके कम से कम 2 मिनट के लिए 66 करीब 4 से 46°C या 78 से 83 मिनट तक अनुरक्षित करने से विकारी खाद्य के प्रति मिलीयन ग्राम में एक मिलीयन स्टैफिलोकॉके निष्क्रिय हो सकता है।

कई लोगों की नाक गमन इस तरह के जीवों से भरा हुआ है जो शिरानाल संदूषण का कारण बन जाता है। जले एवं संदूषित घाव भी स्रोत हो सकता है। मानव त्वचा भी इन जीवाणुओं का स्रोत है, क्योंकि नाक गमन या स्थानीय संदूषणों से ये जीवाणु आते हैं।

एन्टेरोटोक्सीन

स्टैफिलोकॉकै एन्टेरोटोक्सीन 26,000 और 30,000 के बीच के अणु वज़न का सरल, प्रोटीन है। एन्टेरोटोक्सीन के कई प्रकारों में A और D ज्यादातर खाद्य विषाक्त प्रादुर्भाव से संबंधित है। स्टैफिलोकॉकस के अच्छी तरह बढ़ने के बाद ही मान्य स्तर के एन्टेरोटोक्सीन उत्पन्न होता है; प्रति मि लि या ग्रा. में कई मिलीयन संख्या में उत्पन्न होता है। अच्छी परिस्थिति में 4 से 6 घण्टों के भीतर के खाद्य में एन्टेरोटोक्सीन को देखा जा सकता है कि स्टैफिलोकॉके संदूषित होने के बाद टोक्सीन के उत्पादन के लिए ताप प्रक्रिया अनुकूल है। यह देखा गया है कि रोगी की आँत में स्टैफिलोकॉके की बढ़त से टोक्सीन उत्पन्न होता है और जब वहाँ पर अन्य प्रतिस्पर्द्धी जीवाणु जीव के उपचार को नष्ट या अक्रिय बनाते हैं। ज्यादा मात्रा में स्टार्च एवं प्रोटीन की उपस्थिति के कारण स्टैफिलोकॉके से टोक्सीन उत्पादन बढ़ता है।

एन्टेरोटोक्सीन के भौतिक रासायनिक गुण

इन्टेरोटोक्सीन आर्द्रताग्राही है और जल एवं लवण घोल में आसानी से विलयशील है। पेप्सीन एवं ट्रप्सीन जैसे प्रोटीओलेटीक इन्जाइम से एन्टेरोटोक्सीन प्रतिरोध करते, जिस के कारण इन्ट्रागस्टीकल्ली देते समय पाचक तंत्र में टोक्सीन अक्रिय होता है। स्टैफिलोकॉके एन्टेरोटोक्सीन कई तरह ज्यादातर प्रोटीनों से कई ज्यादा स्थायी होता है। एन्टेराटोक्सीन A, D एवं E के एमिनो अम्ल संयोजन एक समान है। जैसे कि B एवं C की तरह। एन्टरोटोक्सिन के इन दो समूह में दो भिन्नताएं उत्पन्न होती हैं। एन्टरोटोक्सिन के प्रकार B एवं C का उत्पादन प्लसमीड द्वारा नियंत्रित होते हैं और प्रारंभिक स्तर की समाप्ति पर मुख्यतः उत्पन्न होते हैं, जबकि एन्टरोटोक्सिन A, D एवं E के प्रकारों का उत्पादन क्रोमोसोम नियंत्रण के अधीन है और संपूर्ण लॉगरीथमीक बढ़ती स्तर में उत्पन्न होता है। फिर भी एन्टेरोटोक्सीन मुख्यतः एस. औरस, एस. एन्टरमीडीस-उत्पादित होते है और एस. हाईकस भी इन टोक्सीन के उत्पादन को रिपोर्ट

किया है।

एन्टेरोटोक्सीन की एक मुख्य विशेषत यह है कि ताप की ओर उसकी स्थिरता। कुछ खाद्य में अल्प ताप अक्रिय होने से एन्टेरोटोक्सीन पुनसक्रियता को प्राप्त करता है। सामान्यतः पास्तुरीकरण 15 सेकण्ड के लिए 72°C का ताप उपचार और अत्यधिक उच्च तापमान ताप (9 सेकण्ड के 143.3°C) एन्टेरोक्सीन के अक्रियता के लिए पर्याप्त नही है। B प्रकार के एन्टेरोटोक्सीन ज्यादा ताप प्रतिरोधी है। ताप प्रक्रिया से पहले सामान्यतः पके खाद्य में निर्मित टोक्सीन नष्ट नहीं होता है। ऐसे खाद्य विषाक्तन कर सकता है, बल्कि कोई भी जीवित स्टैफिलोकॉकै नहीं पाई गयी है। डिब्बाबंधी उद्योग में प्रयुक्त सामान्य ताप प्रक्रिया खाद्य में उपस्थित किसी भी एन्टेरोटोक्सीन को नष्ट करने के लिए पर्याप्त है।

बीमारी का विस्तार

आँकड़ों के अनुसार ब्रिटेन में 1-3% के खाद्य विषाक्तन को देखा गया है। यह बहुत ही आम तरह का खाद्य विषाक्तन है। मगर इसके अपेक्षाकृत कोमल स्वभाव के कारण कुछ लोग बीमार होते हैं। असाधारण रूप में, ब्रिटेन में यह कई वर्षों से रिपोर्ट किये मामलों में 50% से ज्यादा थे। वर्ष 1980 के बाद यह संख्या 28% में कम हुई है।

खाद्य अन्तग्रस्त

कस्टर्ड एवं क्रीम-युक्त बैकरी वस्तुएँ, सुखाया गया मांस और पोल्ट्री ज्यादा प्रादुर्भाव उत्पन्न करता है। सभी स्टैफिलोकॉकै खाद्य विषाक्तन करीब 75% के खाद्य को अपर्याप्त प्रशीतन के कारण उत्पन्न होता है। अन्य मांस और मांस उत्पाद, मत्स्य एवं मत्स्य उत्पाद (पके अवरुद्ध झींगा, डिब्बाबंधी झींगा, अवरुद्ध मत्स्य स्टीक, मत्स्य केक, मत्स्य सौसेज, मत्स्य पुडिंग, ट्यूणा, लवणित हिल्सा, धूम्रित हिल्सा आदि) दूध और दूध उत्पाद, सलाद हिल्सा, कस्टर्ड, पीस एवं सलाद मसाला। अभिशस्त अन्य खाद्य में सम्मिलित हैं।

बीमारियाँ

स्टैफिलोकॉकै के विषाक्तन में प्रत्येक पदार्थ अपनी अति-संवेदनशीलता में भिन्न होता है। टोक्सीन से युक्त खाद्य लेने से लोग बीमार हो जाते हैं। कुछ लोग प्रभावित होते या नहीं भी होते हैं। सामान्यतः इस प्रकार की विषाक्तन-उद्भवन-अवधि (खाद्य का उपभोग एवं रोग लक्षण के पहले प्रकटन के बीच का समय) 2 से 4 घंटे कम होती है, (1 से 7 घंटे रेंजित) अन्य सामान्य खाद्य विषाक्तन लम्बे उद्भवन अवधि रखते हैं।

लालाश्रवण बहुत ही सामान्य रोग लक्षण है। उसके बाद मतली होना, उल्टी करना, उबकाना, विभिन्न कठिनता का उदरीय मरोड और अतिसार। कई मामलों में रक्त एवं बलगम

स्टूल और उलटी में पाये जाते है। सरदर्द, मांस पेशी मरोड, पसीना आना, कँपकँपी, अवसन्नता, धीमी वीक पल्स, जड़ता एवं शैलों खसन हो सकता है। ज्वर की अपेक्षा अकसर असामान्य शरीर तापमान होता है। यह अल्प समय के लिए होता है, अक्सर केवल एक या दो दिन में वे स्वस्थ होते हैं। मृत्यु बहुत ही कम है। ज्यादातर भागों में कोई उपचार नहीं किया जाता है। लवण संतुलन एवं निर्जलन प्रत्यानयन के लिए लवण घोल दिया जाता है। अल्पतम खुराक में या तो उल्टी या अतिसार को सभी एन्टेरोटोक्सीन 0.05 g (3.5 g./70 कि ग्रा प्रति व्यक्ति) देखा गया है। 1 g से कम एन्टेरोटोक्सीन अति संवेदनशील व्यक्तियों में बीमारी उत्पन्न करती है। एन्टेरोटोक्सीन A के कारण 75% कास्टैफिलोकॉकील खाद्य विषाक्तन उत्पन्न करता है।

एन्टेरोटोक्सीन की सूक्ष्म प्रणाली की क्रिया को नहीं जाना जा सकता है। ऐसा प्रतीत होता हैं कि संभवतः वेग्स एवं अनुसंवेदी तंत्रिका-तन्त्र प्रणाली में माध्यम से दिमाग के उलटी केन्द्र में उद्दीपक के संचारण के कारण आँत क्षेत्र में सीमित तंत्रिकाग्राही के उत्तेजन के परिणाम में उलटी एवं अतिसार होता है।

विषाक्तन का वास्तविक रोगनिदान अनिश्चित होता है। फिर भी स्टैफिलोकॉकै को अलग करने पर यह एन्टेरोसेक्सीन को उत्पन्न करता है या अलग करता है और एन्टेरोटोक्सीन को खोजता है।

प्रादूर्भाव के लिए आवश्यक स्थितियाँ

स्टैफिलोकॉकी खाद्य विषाक्तन के प्रादुर्भाव के लिए निम्न परिस्थितियाँ आवश्यक है। 1. स्टैफिलोकॉकै उत्पन्न करनेवाले को एन्टेरोटोक्सि खाद्य में होना चाहिए। 2. स्टैफिलोकॉकै द्वारा टोक्सिन की बढ़त और बढ़त के लिए खाद्य को अच्छा संवर्धन माध्यम होना चाहिए। 3. जीव की बढ़त के लिए तापमान सुविधाजनक होना चाहिए और एन्टेरोटोक्सीन के उत्पादन के लिए पर्याप्त समय दिया जाना चाहिए। 4. एन्टेरोटोक्सीन - वहित खाद्य खिला देना चाहिए।

प्रादुर्भाव रोक

स्टैफिलोकॉकी खाद्य विषाक्तन के प्रादुर्भाव की रोकथाम के साधन में शामिल हैं-1. स्टैफिलोकोकै के साथ खाद्य के संदूषण की रोकथाम 2. स्टैफिलोकॉकै की बढ़त को रोकना 3. खाद्य में स्टैफिलोकॉकै को नष्ट करना।

जल कृषि में सूक्ष्मजीवियों की भूमिका

एम. एम. प्रसाद, जे. के. बन्द्योपाध्याय

प्रस्तावना

विभिन्न प्रकार की खाद्य क्रांतियों के उपरांत भी भारत की 40 प्रतिशत जनसख्या गरीबी रेखा के नीचे गुज़रबसर करती है। खाद्य सुरक्षा एवं कुपोषण देश के समक्ष एक चुनौती है। इस संदर्भ में मात्स्यकी एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है। परंतु जनसंख्या के दबाव में मत्स्य संसाधनों का असावधानी पूर्वक दोहन हो रहा है जिसके कारण प्राकृतिक प्रग्रहण के अलावा मत्स्य कृषि पर विशेष ध्यान देना पड़ता है। मत्स्य कृषि की सफलता जल का समुचित प्रबंध, उचित भोजन तथा स्वास्थ्य प्रबंध पर निर्भर है, जबकि जल संसाधन पहले ही किसी न किसी प्रकार प्रदूषण के शिकार हैं। मानव स्वास्थ्य की दृष्टि से जल प्रबंधन के लिए रसायनों तथा जैवरोधी दवाओं का प्रवेश निषेध है। अन्यथा इनके स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव पड़ते हैं। इस दृष्टि से जैविक उपचार एक प्रभावशाली विकल्प हो सकता है। सूक्ष्म जीवी वातावरण के प्रत्येक स्तर पर पाए जाते हैं। यह सोचना बिल्कुल गलत होगा कि सूक्ष्म जीवी हानिकारक ही होते हैं परंतु सच यह है कि अनगिनत लाभदायक जीवाणु भी होते हैं। परंतु आवश्यकता है उन्हें पहचानने की ओर उनके आवर्धन की।

जल प्रबंधन में लाभकार जीवाणुओं का प्रवेश एक अहम भूमिका निभा सकता है। सघन जल कृषि में अधिक स्टोकिंग एवं उन्नत खाद्यों का प्रयोग किया जाता है जो कि विशेष तया प्रोटीन आधारित होते हैं। प्रोटीन का जीवाणुओं द्वारा विघटन होकर यह अमोनिया तथा कार्बन-डाई-ऑक्साइड में बदल जाता है। जल गुणवत्ता की दृष्टि से अमोनिया प्रदूषण का द्योतक है, परंतु अन्य जीवाणुओं द्वारा अमोनिया को लाभकारी यौगिक नाइट्रेट में परिवर्तित कर दिया जाता है जो कि तालाबों की प्रारंभिक उत्पादकता बढ़ाने में विशेष योगदान देता है। सल्फर युक्त अमिनो एसिड सल्फर में विघटित हो जाता है। पानी की उपस्थिति में का हाइड्रोजन सल्फ़ाइड का निर्माण होता है। जो कि एक प्रबल विष जैसा कार्य करता है। परंतु जीवाणुओं द्वारा सल्फ़ाइड को कम हानिकारक सल्फ़ेट में बदल दिया जाता है। सर्करा विघटन से पानी की अम्लता बढ़ जाती है। सार यह है कि पानी में जितना कार्बनिक पदार्थ होंगे उतनी ही जीवाणु क्रियाएं बढ्ने के साथ पानी की गुणवत्ता कम होगी।

परंतु लाभकारी जीवाणु के द्वारा कार्बनिक पदार्थ का तली में जमा होने से पूर्व ही हो जाए जिससे अवायु हानिकारक जीवाणुओं को पनपने का मौका ही न मिले। इससे मछलियों में रोग होने का खतरा भी कम हो जाता है। यदि जल में जीवाणुओं का उचित वर्चस्व है तो पानी में ऑक्सीजन भी उचित मात्रा में घुलती है, जो सब कुछ मिलाकर आदर्श जल कृषि का द्योतक है। इस प्रपत्र में जीवाणुओं के आवर्धन से जैवरोगरोधकता, बायोटर्बेसन एवं बायोरिमेडिएसन जैसी लाभकारी प्रक्रियाओं पर प्रकाश डाला गया है।

जलीय वातावरण में जीवाणु वृद्धि

जलीय वातावरण में तली में जीवाणु वृद्धि दर इस बात पर निर्भर करती है कि लंबी श्रृंखला वाले पोषक तत्व जैसे वसा, स्टार्च, सैलुलोज का दर से विघटन होकर छोटी श्रृंखला वाले तत्वों में परिवर्तित होते हैं। ये पोषक तत्व जलीय वातावरण में मृत ऐल्गी, अनखाया खाना तथा जलीय जीवों की विष्ठा के रूप में पाए जाते हैं। जीवाणु जो इन पोषक तत्वों का विघटन करते हैं वे अन्य जीवाणुओं की तुलना में अधिक लाभकारी होते हैं। हगीनो (1977) के अनुसार सघन *केज कल्चर* में मछलियाँ केवल 20% भोजन का ही उपयोग कर पाती हैं, 70% पानी में तथा 10% तलछट अवशेष के रूप में जमा होता है।

इस बचे खाने को विघटित करने वाले जीवाणुओं की वृद्धि दर जल के भौतिक एवं रसायनिक गुणों जैसे pH, DO और फस्फेट पर निर्भर करती है। जीवाणुओं में *बैसीलस* जीवाणु अन्य जीवाणुओं की तुलना में उपरोक्त क्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। परंतु इसके तलछट में रहने की स्वभाव के कारण जो एक्सो-एंजाइम तली तक ही सीमित रह जाते हैं जो कि जीवाणु वृद्धि के लिए सहायक है। प्रयोगों से सिद्ध हो गया है कि जब चयनित जीवाणु स्ट्रेनों का प्रवेश किया तो अच्छे परिणाम प्राप्त हुए, परंतु स्ट्रेनों का चयन करते समय विशेष सावधानी की आवश्यकता है। इन जीवाणुओं में मूल जीवाणुओं के मध्य स्थापित होने की क्षमता होनी चाहिए। ऐसे लाभकारी जीवाणुओं के प्रवेश से पानी की गुणवत्ता में सुधार आता है और झींगों को तली में रहना भी सुरक्षित होता है तथा पानी में ऑक्सीजन स्तर भी बढ़ जाता है। और तो और रोगजनित जीवाणु भी कम हो जाते हैं। प्रत्येक जलीय वातावरण के लिए पृथक स्ट्रेन की आवश्यकता होती है क्योंकि विशेष जीवाणु स्ट्रेन एक विशेष वातावरण में ही सक्रिय रहता है। माफिक स्ट्रेन जल जन्तुओं की वृद्धि में भी सहायक है। यह सब बहुत सावधानी से करना चाहिए क्योंकि स्ट्रेन का चुनाव सघनता तथा प्रवेश का समय अति महत्वपूर्ण हैं।

लाभकारी जीवाणु आवर्धन

पिछले दशक में सूक्ष्म-पारिस्थितिकी एवं जैव प्रौद्योगिकी के श्रेणी में अत्यंत विकास हुआ

है जिसका जलकृषि से भी सीधा संबंध है। जैविक उपचार की सफलता जीवाणु स्ट्रेन के चुनाव पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए किसी विशेष कार्य के लिए विशेष स्ट्रेन उनकी उचित संख्या तथा उचित वातावरण का सावधानी पूर्वक चुनाव करना चाहिए। यही सिद्धांत जैविक उपचार एवं प्रोबयोटिक्स पर भी लागू होता है। जीवाणु की प्रभाव क्षमता उस जीवाणु की अन्य जीवाणुओं से प्रतिस्पर्धा की प्रकृति पर निर्भर करता है।

जैविकोपचार आधारित शोधों का विवरण

जीवाणु को तली में चीनी मिट्टी तथा मूँगा पत्थर जिसमें रोम होते हैं, के भीतर प्रवेश करने से जीवाणु अपनी वृद्धि करने के साथ साथ जो कार्बनिक पदार्थ तली में बैठता है, उसे विघटित कर देते हैं। जब *बैसीलस* रिडोक्स पोटेंसियल बढ़ा पाया (हिरारा आदि)। एक अन्य प्रयोग में जब जीवाणु *स्यूडोएल्ट्रोमोनास अन्डीना* स्ट्रेन न. VKM-124 को झींगे के खाने में मिलाकर दिया। झींगों में वज़न वृद्धि, रोग रोधकता में वृद्धि, तलछट अवशेष में सल्फ़ाइड की कमी तथा तलछट में भारी कमी पाई गई। बैन्थिक जल जंतु तली में जमा विघटित कार्बनिक पदार्थों तथा बैक्टीरीआ पर भोजन करते हैं जिसके कारण तली में हलचल के कारण पानी में उपस्थित ऑक्सीजन तली में मिल जाती है, सामान्यतया इस क्रिया को बायोटरबेशन कहते है। जब *केपिटैला स्प.* (पॉलिकीट) का तली प्रयोग करने से तलछट में सल्फ़ाइड तथा कार्बनिक पदार्थों के जमाव में कमी पायी गयी (केरिऑन पैनिक, 1993)। वास्तव में जब बैन्थिक जंतु तलछट में कार्बनिक पदार्थ खाते हैं तो उसमें उपस्थित जीवाणुओं को वृद्धि करने के लिए अधिक स्थान मिल जाता है और लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि हो जाती है (शिर एवं शिर, 1984)। इसलिए वैज्ञानिक *स्यूडोएल्ट्रोमोनास अन्डीना* स्ट्रेन न. TOVKM-124 तथा *केपिटैला स्प.* (पॉलिकीट) के प्रयोग की सिफारिश करते हैं।

जैविक फिल्टर प्रक्रम में लाभकारी जीवाणुओं का प्रयोग

आजकल सघन जलकृषि *में* जैविक फिल्टर लगाने का उद्देश्य तालाबों में उचित जल प्रबंधन की दृष्टि से किया जाता है। पानी जब बायोफिल्टर से होकर गुजरता है तो यह पानी में सूक्ष्मजीवियों की संख्या में बहुत कमी आ जाती है, परंतु तालाब खुले होने के कारण जीवाणु वायु या स्वयं झींगा खाने के द्वारा पानी में आ जाते हैं और वृद्धि करने लगते हैं। कभी कभी यह भी हो सकता है कि हानिकारक जीवाणु अधिक पाए जाए इसलिए इस समस्यासे बचने के लिए लाभ दायक जीवाणुओं को स्थापित कर दिया जायें जिससे हानिकारक जीवाणुओं को पनपने से रोका जा सके।

विषाणु जनित रोगों का जैव नियंत्रण

विषाणु से प्रतिद्वन्दिता करने वाले जीवाणुओं के रोगनियन्त्रण का सिद्धांत जैव नियंत्रक के रूप में माना जाता है। प्राकृतिक समुद्री जल में विषाणुओं की सख्या 10000 से 100000000 होती है और कम मात्रा में विषाणुओं का पाया जाना अनुमानतः प्रतिद्वन्द्वी जीवाणु की उपस्थिति के कारण हो सकता है (कामरि आदि, १९८७)। इस परिकल्पना के आधार पर जीवाणुओं की प्रतिद्वन्दिता के गुणों का अध्ययन किया गया है। चिनौक सालमन में ईनफैक्सियस हिमोपॉइटिक निकरोसिस वाइरस (आई.एच.एन.वी.) की संख्या में कमी पायी गयी जब *स्यूडोएल्ट्रोमोनास अन्डीना* नामक जीवाणु से उपचारित किया गया।

भेक *पीनियस मोनोडन* (एस.जे.एच.एन.वी.), बक्युलोवाईरस तथा ईरीडो वाईरस नामक जीवाणुओं के कारण मृत्यु दर अधिक होती है। परंतु यदि पानी को *स्यूडोएल्ट्रोमोनास अन्डीना* जीवाणु से उपचारित किया जाये तो यह मृत्यु दर बहुत कम पायी गयी (मैडा एवं लिओ, 1994; तनाका आदि, 1996)। रोगों की रोकथाम तथा मछलिओं में रोगरोधी क्षमता बढ़ाने के लिए *स्यूडोएल्ट्रोमोनास अन्डीना* जीवाणु को खाने के साथ भी दिया जा सकता है।

निष्कर्ष

जल प्रबंधन जलकृषि के सफलता की कुंजी है। बढ्ती जनसंख्या दबाव में जलकृषि की अधिक से अधिक सघनता अनिवार्य हो गयी है। दूसरी और पानी की कमी भी एक समस्या है। अधिक संख्या में स्टोकिंग के लिए अधिक मात्रा में खाना भी चाहिए। सब कुछ मिलाकर पानी में जैविक लोड बढ़ जाता है जिससे तालाबों में ऑक्सीजन की कमी, हानिकारक गैसों का निर्माण तथा रोगजनित जीवाणुओं से जलकृषि को भारी नुकसान हो सकता है। झींगों में ह्वाईट स्पॉट रोग इसका एक अच्छा उदाहरण है। इस प्रकार की समस्या से निजात पाने के लिए लाभकारी जीवाणुओं का आवर्धन, जीवाणु उपचार, पूर्व जीवाणु संवर्धन, बायोटरवेशन एवं बायोफिल्ट्रेशन का उपयोग आधुनिक जलकृषि के प्रबंधन का अपरिहार्य मुद्दा बन गया है।

मध्यप्रदेश के जलाशय में मत्स्य पैदावार की प्रणालियाँ

जोर्ज नैनान, एम. स्वामी कुमार

मध्यप्रदेश भारत का एक बड़ा भौगोलिक यूनिट है। इस का कुल ज़ल फैलाव क्षेत्र 0.46 मिलियन हेक्टर है जो मनुष्य निर्मित अवरुद्ध जलाशय के रूप में है और देश के सभी राज्यों के बीच अधिकतम है। इस राज्य में जल फैलाव क्षेत्र का 63% जलाशय हैं और विविध मत्स्यन प्रबंधन व्यवहार केलिए उपयोग किया जाता है। 1995 के आकलनों के अनुसार इन जलाशयों का उत्पादन राज्य के कुल अवतरण का मुश्किल से 8% है। मध्य प्रदेश की सभी श्रेणियों के जलाशयों को एक साथ रखकर देखें तो जलाशयों का उत्पादन दर (kg/ha) 13.68 कि ग्रा है जो चालू राष्ट्रीय औसत 20.13 कि ग्रा से कम है (सुगुणन, 1997)। इन जल निकायों में वाणिज्यिक समुपयोजन व्यवहार केवल देशी मत्स्य प्रग्रहण प्रणालियों के उपयोग से होता है। राज्य के संपोषित जलाशय मत्स्यन प्रबंधन के लिए पर्यावरण अनुकूल यान व गिअर और विद्यमान प्रग्रहण प्रणालियों का वैज्ञानिक मूल्यांकन करना एक मुख्य घटक है। यह प्रपत्र मध्य प्रदेश के जलाशय मत्स्यन में प्रयुक्त विभिन्न प्रकार के मत्स्यन यान एवं देशी मत्स्यन गिअरों के अभिकल्प एवं परिचालन विवरण प्रस्तुत करने का एक प्रयास है।

सामग्री एवं पद्धतियाँ :

गाँधीनगर, बर्गी, तवा, बरना और हलाली आदि मध्य प्रदेश राज्य के पांच प्रमुख जलाशयों के बैंच मार्क सर्वेक्षण कार्यक्रम के दौरान प्राप्त सूचना इस प्रपत्र में दी गयी है। सर्वेक्षण दिसंबर 1998 से फरवरी 1999 के दौरान किया गया था। अध्ययन के लिए जलाशयों के प्रमुख मत्स्य अवतरण केन्द्रों को चुना गया था। इस सर्वेक्षण से संबंधित सूचना के एकत्रण के लिए स्थानीय मछुवारों से भी साक्षात्कार किया गया था। इस सर्वेक्षण के लिए चुनिंदा विभिन्न केन्द्रों की सूची **सारणी 1** के अनुसार है।

सारणी 1-अध्ययन के लिए चुने गए जलाशयों का विवरण

जलाशय	नदी प्रणाली	जिला	क्षेत्र (हे.)	केन्द्र
गांधी सागर	चम्बल	मन्दसौर	66000.0	बांध स्थान रामपुरा, संजीत
बर्गी	नर्मदा	जबलपुर मन्दला एवं सीओनी	27296.0	मगर्दा, पप्री
तवा	तवा	होशंगाबाद	20242.0	बांध स्थान बंग्लापुरा, टेकेपर
बरना	बरना	राईसीन	7760.0	बांध स्थान
हलाली	हलाली	राईसीन	7712.0	बांध स्थान

मत्स्यन यान

भारतीय जलाशयों में सामान्यतः प्रयुक्त मत्स्यन यान छोटे, बिना मोटरीकृत और लकड़ी के धेते हैं (खाह और अन्य, 1991)। मध्यप्रदेश के जलाशयों में जहाज़ सामान्यतः 3.9 मी से 7.1 मी OAL रेज के बिना मोटरीकृत सपाट निचल के छोटा डोंगिया है। ये स्थानीय लोगों के बीच में 'नावस' या 'डिंगीस' के रूप में जाना जाता है। पहले मध्यप्रदेश के जलाशय मत्स्यन में प्रयुक्त ज्यादातर जहाज 'टीक की लकड़ीं' (टेक्टोना ग्रान्टीस) से तैयार किये जाते थे। इस समय केवल गांधीनगर जलाशय में टीक लकड़ी के डोंगियों को देख सकते हैं। टीक लकड़ी का निषेधक कीमत होने के कारण मछुवारे लोहा शीट (जी आई), नीम लकड़ी (अजादीरचता इंडीका) और समुद्री परतदार लकड़ी जैसे सस्ती सामग्रियों का उपयोग करते हैं। बरना, हथाली एवं बर्गी जलाशयों में 20 गोज मोटे के (जी आई) शीट के डोंगियों का उपयोग किया जाता है जबकि तवा जलाशय में जी आई शीट के साथ साथ समुद्री परतदार लकड़ी की डोंगियाँ परिचालन में हैं। गांधीनगर में टीक लकड़ी एवं नीम लकड़ी दोनों से तैयारित फलक निर्मित डोंगियों का उंपयोग हो रहा है। फिर भी, यह देखा गया है कि नीम लकड़ी डोगियाँ ज्यादातर संपूर्णतः टीक लकड़ी डोंगी से परिवर्तित टीक का कीमत उच्च होने के कारण हुआ है।

आई आर डी पी योजना के अधीन सहकारी समिति के शीर्ष महासंघ, जो तवा और बर्गी जलाशय की मात्स्यकी का नियंत्रण करता है, मछुवारों को जी आई शीट के नावों को उपलब्ध कराता है। तवा में दो नाव (5 एच पी ओ बी एम) अनधिकार शिकार को रोकने के लिए जलाशय की गश्त लगाने उपयोग किया जा रहा है।

मध्यप्रदेश में जलाशय मत्स्यन के यानों के सामान्य प्रकारों के अभिकल्प का विवरण **सारणी-2** में दिया गया है।

सारणी 2 जलाशय में उपयोगित मत्स्य यानों का विवरण

क्र. सं.	जलाशय	प्रकार	सामग्री	OAL (m)	बीम अधिकतम	गहराई (m)	करीब जीवनकाल (वर्ष)	लगभग कीमत (रु)
1.	गांधी सागर	क	नीम	7.10	1.4	0.5	6	6000
		ख	टीक	7.10	1.4	0.5	15	19000
2.	बर्गी		जी आई	3.9	1.45	0.5	5	5000
3.	तवा	क	जी आई	0.4-4.9	1.1-1.35	0.4 0.45	5	4500-5000
		ख	समुद्री पश्तदार लकडी	5.0	1.8	0.6	7	6500-7500
4.	बरनी		जल आई	4.8	1.6	0.51	5	5000
5.	हलाली		जी आई	4.8	1.6	0.5	5	5000

मत्स्यन गिअर

क्लोम जाल

जलाशय मत्स्यन में मुख्य रूप से उपयुक्त गिअर है सामान्य क्लोम जाल जिसे साधारणत: रगून जाल कहा जाता है (कुरियन, 1973)। यह एक अधोभाग रस्सी रहित फँसाने वाला जाल है। वेबिंग सामग्री पॉलीमीड (पी ए) है, दोनों एकतंतु या बहुतंतु। इन जलाशयों में क्लोम जाल मतयन मत्य अवतरण में प्रमुख हिस्सा रखता है। मुख्य शिकार जैसे कटला, रोहू एवं मृगाल क्लोम जाल के शिकार में ज्यादा होते हैं। तवा जलाशय में पी ए बहुतंतु क्लोम जालों का उपयोग किया जाता है, जबकि गांधीसागर में केवल पी ए एकतंतु जल परिचालित होता है। अन्य सभी जलाशय में पी ए एकतंतु एवं बहुतंतु जालों का उपयेग किया जाता है। तवा जलाशय में एकतंतु क्लोमजाल स्थानीय रूप में "करेन्ट जाल" या "डिस्को जाल" के नाम से जाने वाला जाल अपनी अनुपस्थिति को स्पष्ट करता है। यह विशेषकर कटल जाति का भण्डार जल्दी खत्म होने के डर के कारण मछुवारे खुद बहुतंतु के उपयोग पर रोक लगाये हुए हैं।

अभिकल्प एवं संरचना

सरल क्लोम में नाईलान शीर्ष रस्सी एवं प्लव होता है और उस में तल रस्सी एवं निमज्जक नहीं रहता। विस्तारित पॉलीस्टरीन (थारमोकोल) के टुकडों को प्लव के रूप में उपयोग किया जाता है। नेवार को शीर्ष रस्सी से बाँधकर ऊपर लगाया जाता है। इस मामले में, आरोपण रस्सी

और शीर्ष रस्सी की मोटाई 210/6/3 होती है। क्लोम जाल का मेश आकार 100 मि मी से 280 मि मी के रेंज में होता है। मत्स्यन में संरक्षण उपाय के रूप में, जलाशय में क्लोम जाल के लिए अल्पतम मेश आकार 100 मि मी नियत किया गया है। सरल क्लोम जाल अभिकल्प का विवरण **सारणी 3** में दिया गया है।

सारणी 3 जलाशय में देखे गये सरल क्लोम जाल के अभिकल्प का विवरण

जलाशय	मेश आकार (mm)	वेबिंग सामग्री	आर टोक्स	शीर्ष रस्सी सामग्री	आर टोक्स	गहराई में मेशों की सं	जाल की गहराई (m)	लटकन का अनुपात (E)
गांधी सागर	100-250	पी ए एक	90-155	पी ए बहु	455	20-50	4.30	0.5
तवा	100-240	पी ए बहु	76	पी ए बहु	455	14-35	3.0	0.5
बर्गी	100-200	पी ए एक	90-155	पी ए बहु	455	40-80	6.88	0.5
बरना	100-280	पी ए एक एवं बहु	76-155	पी ए बहु	455	22-35	3-6.88	0.5
हलाली	100-240	पी ए एक एवं बहु	50-155	पी ए बहु एवं 455	303	27-67	2.58-6.88	0.5

गांधी सागर में दो मछुवारे बोर्ड पर क्लोम जाल मत्स्यन करते हैं। सामान्यतः वे 3-5 दिन की लम्बी यात्रा करते हैं। गांधी सागर में करीब 45 छोटे द्वीप है जहाँ पर मत्स्यन यात्राओं के दौरान मछुवारे कैंप डालते हैं। शिकार एवं मौसम के आधार पर जाल को रात-दिन परिचालित किया जाता है। इन केन्द्रों से शिकार के परिवहन करने के लिए 9 मी OAL इंजन HP रेंज 24-37 युक्त यांत्रीकृत बोटों का उपयोग किया गया है। शिकार को मुख्य अवतरण केन्द्रों तक परिवहन करने के लिए इन बोटों को एम पी एफ डी सी द्वारा दिया गया।

गांधी सागर में एक बोट द्वारा औसत 30-40 कि ग्रा का क्लोम जाल को परिचालित किया गया, जबकि बरनी एवं हलाली में यह केवल 5-6 कि ग्रा था। इन जालों का परिचालन सतह सेट या कॉलम सेट के रूप में परिचालित किया गया है।

लाइन मत्स्यन

अध्ययनाधीन सभी जलाशयों में लम्बी लाइन मत्स्यन किया जाता है। इन का परिचालन उन क्षेत्रों में किया गया जहाँ पर जलमग्न वस्तुएँ अन्य गिअरों के उपयोग को रोकती हैं (खान 1991)।

यह गिअर पी ए 210/6/3 और 300-400 ब्रांच लाइन से तैयारित मुख्य लाइन है। तवा में परिचालित ब्रच लेन पी ए (210/5/3) और बर्गी का 210/3/3 से तैयारित है। मुख्य लाइन

संलग्न थारमोकोल प्लव के उपयोग के साथ यह लाइन बहाव को अनुमत करता है। सामान्यतः 300-400 हूक एक एकल यूनिट के रूप में एक बोट से परिचालित होता है। दो ब्रांच लाइनों के बीच की दूरी, ब्रांच लाइन की लम्बाई एवं प्लव लाइन की लम्बाई स्थान-स्थान पर भिन्न होती है। सामान्यतः ब्रांच लाइन की लम्बाई करीब 2 मी और दो संलग्नों की बीच की दूरी करीब 0.5 मी है। एक अग्र में थारमोकोल प्लव संलग्न है और 10-15 मी. की दूरी में मुख्य लाइन के साथ प्लव लाइन की लम्बाई 1 मी है।

तवा जलाशय में परिचालित हूकों की संख्या 8-11 रेंजित है, जबकि बर्गी में (16-18) छोटे हूकों को उपयोग किया जाता है। यह हूक नियमित, सीधे मोड और काँटा व पोइन्ट के साथ है। छोटे मत्स्यों एवं केंचुओं को चारे के रूप में उपयोग किया जाता है। लम्बी लाइन में शिकार में परभक्षी मत्स्य जैसे एओरीचटीस जाति, नोटप्टेरस जाति और बैलनगों अट्टु सम्मेलित है।

समुद्र तट सीन जाल

सीन जालों का परिचालन जलाशयों में होता है, जिन्हें समुद्रतट सीन के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है (ब्रैंडथ, 1984)। मध्यप्रदेश के जलाशयों में समुद्रतट सीन का उपयोग होता है जिन्हें स्थानीय और पॉकेट रूप में "महाजाल" कहते हैं। इसे बिना किसी बाह्य बैग और पॉकेट के समुद्रतट सीन कहा जा सकता है (जॉर्ज 1971)। गरमी के महीनों के दौरान इस गिअर को साफ निचल के उथल जल में परिचालित किया जाता है।

अभिकल्प एवं परिचालन

यह गिअर तीन भागों में विभाजित है। मध्य भाग अवतरण बैग से जाना जाता है जिसके दोनों भागों में दो पंके रहते हैं। समान लम्बाई के तीन पेनल्स से पंक तैयार किया जाता है। केन्द्रीय अवतरण बैग और पंकें मिलकर समान लम्बाई के 7 पेनल होती है। पंकों के अंत में आते-आते प्रत्येक पैनल का केन्द्रीय बैग ज्यादा गहराई रखता है और 7 पैनलों के बीच मेश आकार छोटा होता है। थरमोकोल के टुकडों को प्लव के रूप में उपयोग किया जाता है, जिन्हें 2 मी के अंतराल के पास शीर्ष रस्सी संलग्न किया जाता है और 5 मी अंतराल के पास तल रस्सी में करीब 150 ग्रा का पथर निम्मजक होता है।

तट से 100-200 मी दूरी पर जाल को ले जाया जाता है और तट में एक मेहराब की तरह फैलाया जाता है। जाल को तट में ऐसे फैलाया जाता है कि सतह रस्सी शीर्ष रस्सी से कुछ आगे हो और तट को पहले पहूँचे। गिअर के परिचालन के दौरान निचले भाग से सतह रस्सी की चढ़ाई को रोकने के लिए सावधानी एवं व्यवहार की आवश्यकता है। इस गिअर के आकार के आधार पर गिअर के परिचालन के लिए आवश्यक मछुवारों की संख्या निर्भर रहती है।

सामान्यतः 4-5 लोगों की आवश्यकता मध्यम आकार के परिचालन के लिए होती है।

मध्यप्रदेश की जलाशय-मात्स्यकी पूर्णतः देशी मत्स्य प्रग्रहण प्रणाली पर निर्भर है। जलाशयों में परिचालित मत्स्यन यान एवं गिअर मध्यप्रदेश की नदीय प्रणाली के समान ही है। कार्यक्षमता में सुधार लाने के लिए परम्परागत गिअर के अभिकल्प एवं संरचना में परिवर्तन की आवश्यकता है। के मा प्रौ सं के अन्वेषण ने यह दिखाया है कि रंग अनुकूलतम क्लोम जाल एवं फ्रेमड क्लोम जाल का उपयोग करते समय दूर उत्तर पश्चिम तट में हिल्सा का शिकार एवं गांधी सागर जलाशय में स्वच्छ जल मत्स्य शिकार में विशेष सुधार है। 0.5 और 0.8 के बीच का निलंबी अनुपात रखने पर जाल के आकार चुनाव सुधरता है और क्लोम प्रवर्तन बढ़ता है (भूपेन्द्रनाथ, एम.आर., 2000)।

जलाशय में प्रग्रहण तकनीक के सुधार के परिचय के लिए अभिकल्प, संरचना विवरण और देशी मत्स्यन गिअर के परिचालनीय पहलुओं पर एक विस्तृत अध्ययन पूर्वापेक्षित है। मछुवारों को सुधरित गिअर की संरचना एवं परिचालन में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए जिन का परिचय उडीसा के हिराकुड जैसे जलाशय में सफलता पूर्वक किया गया है। इस से मध्यप्रदेश जलाशय मत्स्यन के बेहतर प्रबंधन में सहायता हो सकती है और संसाधनों के उत्तरदायी शोषण द्वारा उत्पादन की बढ़त भी हो सकती है।

के.मा.प्रौ.सं. में पर्यावरण-अनुकूल मत्स्यन व मत्स्य संसाधन - एक रिपोर्ट

पृथ्वी पर जीवन की गुणता को बढाने के लिए मानव जाति अतोषणीय प्यास रखती है और इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अनन्त संघर्ष कर रही है। यह अवश्य ही मानव के प्रयासों का प्रेरक बल है। औद्योगिक क्रांति, खाद्य क्षेत्र की विभिन्न क्रांतियाँ, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के भेदन एवं अन्वेषण - ये जीवन की गुणता, भौतिकता व बौद्धिकता को बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुए हैं। इन उपलब्धियों ने पृथ्वी पर नकारात्मक स्थिति पैदा की है। यानी प्रदूषण के कारण जीव मण्डल का निम्नीकरण।

प्रतिकूल असर डालनेवाली मनुष्य निर्मित वस्तुओं से संदूषित पर्यावरण को ही प्रदूषण कहा जा सकता है। वायु, जल या पृथ्वी का संदूषण मानव स्वास्थ्य, जीवन की गुणता या पारितंत्र के स्वाभाविक कार्य में हस्तक्षेप करता है। मनुष्य का कोई भी कार्यकलाप, चाहे वह कृषि, उद्योग या अन्य कुछ भी हो, पर्यावरण प्रदूषण में सहायक बन जाता है। केवल उसकी मात्रा भिन्न होती है। मत्स्यन उद्योग, मात्स्यकी एवं मत्स्य संसाधन भी इस सामान्य नियम से परे नहीं है। भारत में मात्स्यकी उद्योग मानव शक्ति का कृषि क्षेत्र के बाद दूसरा बड़ा नियोक्ता के रूप में बढ़ गया है और देश का एकल बड़ा निबल विदेशी अर्जक भी है। मत्स्य शिकार एवं मत्स्य संसाधन कार्यक्षेत्र में आधुनिक तकनीक एवं प्रौद्योगिकी के परिचय कराने से ही यह उपलब्धि प्राप्त हुई है, जो पर्यावरणीय निम्नीकरण के साथ साथ गंभीर अनुवर्ती समस्याऐं भी उत्पन्न करती है । वायु, जल और भूप्रदेश के निम्नीकरण के लिए कारणभूत भिन्न उद्योगों में मात्स्यकी को भी वर्गीकृत किया गया है।

मानव प्रगति के परिणाम स्वरूप एक प्रकार का पर्यावरणीय निम्नीकरण उत्पन्न हुआ है। वह है पारितंत्र की जैव-विभिन्नता का संकट। मात्स्यकी में पहले से ही पेरू एक उदाहरण है जहाँ मत्स्य आहार के निर्माण के लिए सारडीन का ज्यादा मत्स्यन करने के परिणाम स्वरूप उस क्षेत्र से मात्स्यकी का ही संपूर्ण लोप हो चुका है। नाजूक पारितंत्र को अस्वस्थ करनेवाले किसी भी कार्यकलाप के योजित विकास में संरक्षण उपायों का होना ज़रूरी है।

केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान शुरू से ही मत्स्यन एवं मत्स्य संसाधन के कार्यों से होनेवाले पर्यावरण के संकट से चौकस है और इसलिए उसके अनुसंधान एवं विकास कार्यकलापों

में पर्यावरण प्रदूषण के नियंत्रण को प्राथमिकता मिली है। मत्स्यन उद्योग से उत्पन्न प्रदूषण, जैव विविधता के संकट की रोकथाम और मत्स्य जातियों का संरक्षण आदि उपाय इस में शामिल हैं।

पर्यावरणीय निम्नीकरण के लिए बहुत अधिक योगदान देनेवालों में हैं मत्स्यन कार्यविधि-पेट्रोलियम हाईड्रोकार्बन से मत्स्यन यान समुद्री पर्यावरण को दूषित करता है। विविध समुद्री संकटापन्न जातियों का विनाश जाल के अविवेकी शोषण से होता है। इस क्षेत्र में किए गए नुक्सानों की कोई धारणा तक नहीं है। पर्यावरणीय नुक्सानों के बारे में और इस स्थिति को सुधारने विचार आजकल सब कहीं फैल रहा है। के मा प्रौ सं ने इस ओर बहुत कुछ किया है जिसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है।

ईंधन-क्षम मत्स्यन जहाज़ का अभिकल्प एवं विकास

मत्स्यन शक्ति गहन प्रतिक्रिया है। उसकी विभिन्न आवश्यकताओं के लिए यंत्रीकृत/ मोटरीकृत मत्स्यन जीवाश्मी इंधन पर आश्रित है। पर्यावरणीय प्रदूषण में जीवाश्मी इंधनों का बडा हाथ है, जिस से विश्व तापन से लेकर बहुत सारे परिणाम और पौधाघर प्रभाव के लिए जिम्मेदार भी है। यह आकलित किया गया है कि नौपरिवहन उद्योग के करीब 50% इंधन का उपभोग यंत्रीकृत मत्स्यन में होता है। यह आकलित किया जाता है कि एक मत्स्यन जहाज़ के परिचालन लागत में करीब 70% व्यय केवल ईंधन के लिए है। इसलिए इंधन के बचाव से केवल लागत में ही नहीं बल्कि पर्यावरणीय प्रदूषण के स्तर में भी कमी आती है।

सागरकृपा

7.67 - 15.24 मी रेंज आकार के 12 मानक मत्स्यन जहाज़ों के अभिकल्प को विकसित

एवं लोकप्रिय करने का के मा प्रौ सं का कार्य एक रिकार्ड है। संस्थान ने इन अभिकल्पों के आधार पर आदिप्त रूप का निर्माण किया है और भारतीय परिस्थिति के अधीन मत्स्यन के विभिन्न प्रकारों के लिए उसकी उपयुक्तता प्रामाणित की है। साठ के प्रारंभ में इंधन क्षमता के बारे में किसी ने सोचा तक नहीं था। बाद में, 1997 में, इंधन क्षम मत्स्यन यानों के अभिकल्प को विकसित किया और उसका एक आदिप्ररूप तैयार किया और उसका 'सागरकृपा' नामकरण भी किया।

सागरकृपा 15.5 मी OAL यान है जो इस्पात से बना है और केवल 125 BHP इंजन शक्ति रखता है। इस श्रेणी के अन्य किसी जहाज़ को आवश्यक इंजन शक्ति से बहुत कम शक्ति की ज़रूरत है। परम्परागत अभिकल्प की उसी श्रेणी के अन्य किसी जहाज़ से ज्यादा क्षमता इस अभिकल्प में है। इंधन, स्वच्छ जल, बर्फ एवं मत्स्य संग्रहण एव्रं बोर्ड पर अच्छी सुविधाऐं जैसे कर्मीदल केलिए रसोई, शौचालय और डेक पर मत्स्यन परिचालनों की अच्छी व्यवस्था के लिए इस जहाज़ में उच्च क्षमता उपलब्ध है। इन सभी सुविधाओं के बावजूद जहाज़ अन्य समान श्रेणी के जहाज़ों की तुलना में समान मत्स्यन परिचालनों के लिए 20% कम इंधन का उपभोग करता है। एक सहकारिता निकास के परिचालन के लिए यान तीन महीनों के लिए पट्टे पर दिया था। उपयोगी निकास द्वारा दिये गये आँकडों के आधार पर इस श्रेणी के विद्यमान जहाज़ की तुलना में यह जहाज़ प्रति वर्ष HSD का 16.000 लीटर को बचाता है। मितव्ययता के संबंध में ज्यादा बचत असल में चाहिए और पर्यावरण पर कम प्रभाव होना चाहिए। इस धारणा को उद्योगों ने पहले से ही अपनाया और आगामी दिनों में काठ के स्थान पर इस्पात का प्रयोग करके पर्यावरण अनुकूल स्थिति के लिए वनों का निरावरण करने की भी ज़रूरत नहीं है।

उच्च धातुओं द्वारा प्रदूषण का निरोध

मानव द्वारा उत्पादित सभी प्रदूषणों के लिए समुद्र अंतिम कूडे का ढेरा है। समुद्री जल के प्रदूषण के सहायक कई तथ्यों में उद्योग, कृषि और मानव रद्दी का निष्कासन प्रमुख है। मैथील मेरकुरी जैसे उच्च धातु विशेषकर कार्बधात्विक यौगिक से युक्त औद्योगिक संदूषण द्वारा समुद्री जल का निम्नीकरण और उसका मानव जीवन पर संकट प्रलेखित किया जा सकता है। यंत्रीकृत मत्स्यन जहाज़ के साथ नौ-परिवहन उद्योग भी मेरकुरी द्वारा प्रदूषण के सहायक के रूप में पहचाना गया है।

कई लवण विलीन समुद्री जल एक शक्तिशाली विद्युत्-अपघट्य है। समुद्री वायुमंडल से किसी धातु आकार से निरन्तर प्रभावित होने से सख्त संक्षारण हो सकता है जिस से कि ज्यादा आर्थिक क्षति होती है। इस संक्षारण नियंत्रण का अच्छी और आसन्न पद्धति है आकार को कैथोड़ में परिवर्तित करना। आकार के उपयुक्त स्थान पर एक उपयुक्त धातु का एनोड़ रखा जाना

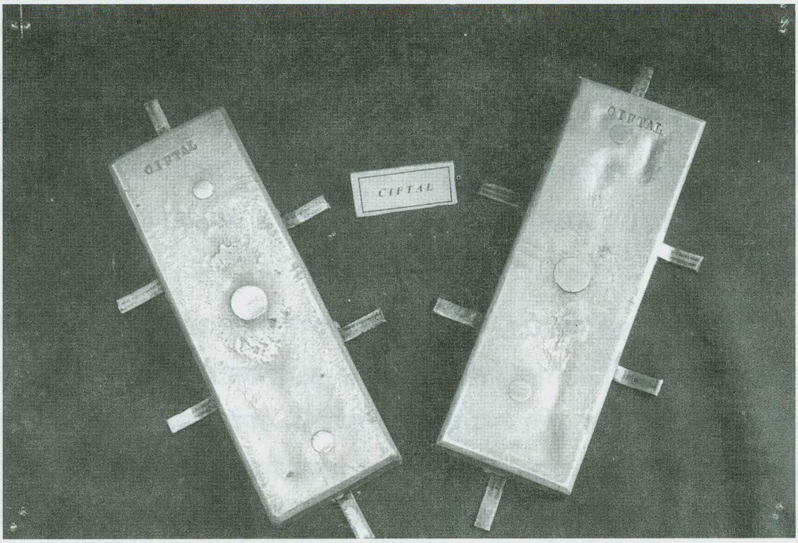

के.मा.प्रौ.सं. में विकसित सिफटेल

चाहिए, जिस की समाप्ति पर असंक्षारित आकार प्राप्त होता है। समुद्र में जाने वाले जहाज़ों में एनोड़ छिलके को उपयुक्त स्थान पर लगाया जाता है। वाणिज्यिक रूप में उपलब्ध एनोड़ मेरकुरी से युक्त होता है। यह धातु जल को प्रदूषित करता है। भारत के तटीय जल में 54000 यंत्रीकृत एवं 45000 मोटरीकृत यान परिचालित होते हैं। इन जहाज़ों से मेरकुरी द्वारा प्रदूषण के संभावित संकट को उपेक्षित नहीं किया जा सकता है। के मा प्रौ सं ने इस संभावना को पूर्वानुमानित किया है। मेरकुरी मुक्त त्रिधातुक एलुमिनीयम एनोड, कोडनाम 'सिफटेल' का विकास आदि इस ओर के कुछ प्रयास है। इस्पात ट्रॉलरों और एलुमिनियम आवरित लकड़ी जहाज़, जो कि उसके मिश्रित विलीन को प्रकटित करता है, प्रवाह कार्यक्षम और चालक वोल्टता पर विस्तृत क्षेत्र परीक्षण संचालित किया गया। इस एनोड का जीवन कल वाणिज्यिक रूप में उपलब्ध नमूने से तीन गुना ज्यादा है।

पर्यावरण अनुकूल मत्स्यन गिअर

ट्रॉल जाल तटीय-मत्स्यन में व्यापक पैमाने पर प्रयुक्त गिअर है। यह जाति विशेष का लक्ष्य नहीं करता है। इस से शिकार किये जाने पर पर्याप्त मात्रा में उपपकड भी शामिल रहती है। उपपकड का मतलब है शिकार का एक भाग जो लक्ष्य जाति से भिन्न होता है, जबकि मत्स्यन मूलतः कुछ विशेष जाति के लिए किया जाता है। होता यह है कि ट्रॉल समुद्री-तल का अक्सर स्पर्श करता है। इस से परितंत्र में अनुक्रमणीय परिवर्तन उत्पन्न होता है। समुद्री कछुए जैसी कई जातियों का शिकार ट्रॉल में आ जाता है और जैव विविधता को क्षति पहूँचाता है। विभिन्न प्रकार

के गिअरों द्वारा किशोर मत्स्य का शिकार भी गंभीर चिन्ता का विषय है। केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान ने इन सभी समस्याओं पर ध्यान रखा है और पर्यावरण एवं जैवविविधता को प्रभावित करने वाले मत्स्यन को कम करने के लिए विभिन्न तकनीकों एवं प्रौद्योगिकियों को विकसित किया है।

के.मा.प्रौ.सं. में विकसित लम्बा मेश ट्रॉल

लम्बे मेश ट्रॉल का अभिकल्प एवं विकास

झींगा संसाधित समुद्री उत्पाद के निर्यात में मुख्य आधार है। अनुवर्ती रूप में झींगे के लिए ज्यादातर यंत्रीकृत मत्स्यन व कार्यकलाप ट्रॉलिंग की आवश्यकता है। सघन मत्स्यन तरीकों में सब से अधिक इंधन क्षम है ट्रॉलिंग। यह तल सतह में एक थैली आकार गिअर को खींचता है जिस से कर्षण उत्पन्न होती है। कुल ट्रॉल कर्षण के 60% से ज्यादा केवल जाल से ही उत्पन्न होता है। ट्रॉलिंग के दौरान इंधन उपभोग गिअर प्रणाली के कर्षण से संबंधित है। अगर इस कर्षण को गिअर के बिना कार्य क्षमता के प्रभाव को कम किया जा सकता है तो इंधन के उपभोग में सन्तुलित बचत प्राप्त किया जा सकता है और पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव को कम किया जा सकता है। के मा प्रौ सं के अन्वेषण ने यह प्रमाणित किया है कि अग्र भाग में लम्बे मेश परिवर्तन द्वारा उसके पहले के ट्रॉल अभिकल्प में संशोधन द्वारा ट्रॉल के कर्षण प्रणाली को करीब 7% इंधन उपभोग में संतुलित कमी के साथ कम किया जा सकता है। नया अभिकल्प निवल बृहत ट्रॉलिंग गति को अनुमत करता है और उपलब्ध इंजन शक्ति के साथ लम्बे ट्रॉल का परिचालन करता है। मत्स्यन समुदाय में नव अभिकल्पित गिअर पहले से ही लोकप्रिय है।

रोप ट्रॉल

रोप ट्रॉल के मा प्रौ सं का और एक इंधन क्षम अन्वेषण है। रोप ट्रॉल, लम्बे मेश ट्रॉल जैसे, परम्परागत ट्रॉल का संशोधित रूप है जिस के अग्र भाग को रस्सी द्वारा परिवर्तित किया गया है। लम्बे मेश तलमज्जी ट्रॉल के अनुसार यह संशोधन ट्रॉल विरोध का परिणाम है। रोप का यूथ प्रभाव, जाल में फिन मत्स्य की पकड के लिए सहायक बन जाता है। कम कर्षण से बृहत् ट्रॉलिंग गति और उपलब्ध इंजन शक्ति से बडे ट्रॉल का परिचालन होता है।

उभारा ऊद बोर्ड

मत्स्यन के समय उपयुक्त ट्रॉल जाल के सीधे एवं समतल खुलाव को अनुरक्षित करने वाला यह एक क्रांतिक जुगत नियोक्ती ऊद बोर्ड है और जाल के कार्यक्षम परिचालन के लिए अनिवार्य है। फिर भी, ट्रॉल प्रणाली के कुल कर्षण के करीब 20-25% ऊद बोर्ड को सहयोगी समझा जाता है, जो कि उसके उपयोग द्वारा प्राप्त लाभ को कुछ हद तक प्रीतिकर करता है। इसलिए के मा प्रौ सं ने उभारे ऊद बोर्ड के अभिकल्प को परिचित कराया है जो कि द्रवगतिकीय कार्यक्षमता द्वारा पट के विरोध को ज्यादातर कम करने में सहायक है। अतः इस अभिकल्प की

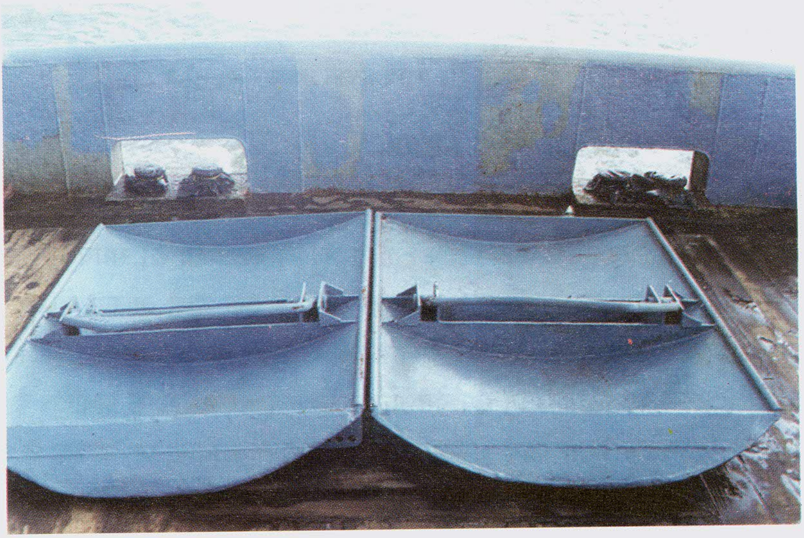

उभारा ऊद बोर्ड

विशिष्टताऐं इंधन उपभोग एवं पारितंत्र पर प्रभाव को कम करने में सहायक है। अर्ध वेलापवर्ती ट्रॉलिंग छोटे यंत्रीकृत यान के लिए विभिन्न आकार के उभारे ऊद बोर्ड उच्च पहलू अनुपात को के मा प्रौ सं ने परिचित कराया है।

V - आकार ऊद बोर्ड

V- आकार ऊद बोर्ड द्रवगतिकीय कार्यक्षमता एवं इंजन शक्ति के इंधन उपयोग में समर्थ है। यह अल्प विरोध को पेश करता है और ईंधन उपभोग में बिना उन्नति के उसकी ट्रॉलिंग की गति को बढ़ाया जा सकता है। यह बोर्ड पट तल में जुताई/खुदाई नहीं करता और तल के छोटी बाधाओं को पार कर सकता है। इसलिए असमतल एवं पथरीले स्थान में ट्रॉलिंग के लिए उपयुक्त है। अगर V- आकार बोर्डों को सुसज्जित करके रखें तो 5-6 वर्ष की सेवा उपलब्ध होगी और शिकार व खिंचाव सुरक्षित और सस्ता हो सकता है।

V - आकार ऊद बोर्ड

उप पकड़ घटाव युक्तियाँ

विभिन्न प्रकार के मत्स्यनों के बीच ट्रॉलिंग में लक्ष्य जातियों के साथ सब से अधिक उपपकड़ प्राप्त होती है। ट्रॉल शिकार का 70-90% से ज्यादा उपपकड़ है इस में करीब 40% किशोर शामिल है जिसे अनिवार्य रूप से छाँटे जाने के कारण दो गंभीर समस्याऐं उत्पन्न होती हैं - संपदा की कमी एवं समुद्री जल का प्रदूषण जो परितंत्र के अनुवर्ती संकट का कारण बन जाता है। उपपकड़ की मात्रा ज्यादा होने पर मत्स्यन परिचालन से आर्थिक लाभ कम हो जाती है। मत्स्यन परिचालन में उपपकड़ अनिवार्यतः होती है; लेकिन गिअर और उसके परिचालन के प्रकार के अनुसार उसकी मात्रा में भिन्न होती है। इसलिए के मा प्रौ सं के अनुसंधान निवेशों में मुख्य है उपपकड़ घटाव युक्ति का विकास।

झींगा ट्रॉलिंग के दौरान लक्ष्य न किए गये और अवांछित प्रजाति मत्स्यों के पैदावार की घटौती ही उपपकड घटाव युक्ति (BRD) का लक्ष्य है। जबकि BRD उपपकड को निष्कासित

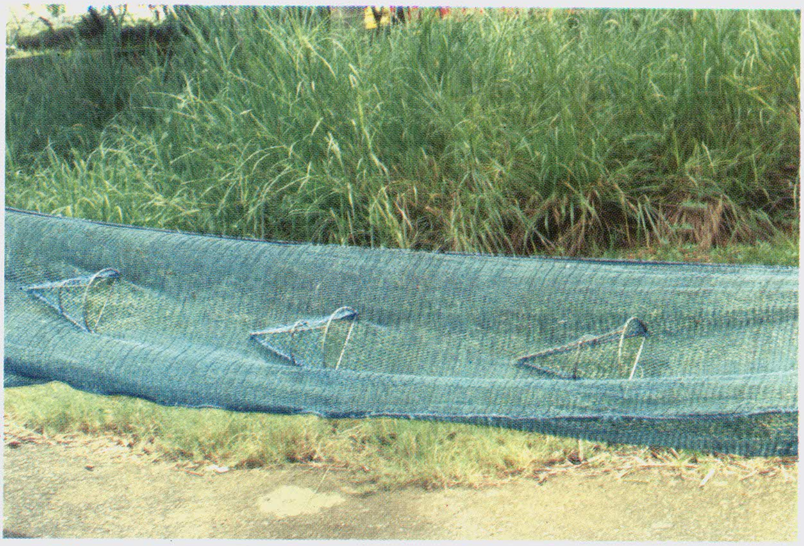

उप पकड घटाव केलिए मत्स्य ऑख जाल

एवं घटाव करने के लिए नियोजित किसी भी युक्ति के लिए प्रयुक्त आम शब्द है; कछुआ अपवर्जन युक्ति (TED), मुख्यतः BRD ही है, जो कछुआ, शार्क, रे आदि को भी ट्रॉल से निकालने के लिए विशेष रूप से। अभिकल्पित है। इसका मुख्य उद्देश्य पर्यावरण सुरक्षा ही है।

वर्ग मेश गवाक्षा संलगनी

लक्षित जातियों के किशोरों के शिकार के साथ साथ सामान्यतः छोटे आकार के मत्स्यों

वर्ग मेश पैनल

को वर्जित करने के लिए चुनींदा गइड एवं वर्ग मेश का ट्रॉल मात्स्यकी में प्रयुक्त किया जाता है। ट्रॉल की छानने की क्षमता दो तरीकों से बढाया जा सकता है, - मेश आकार को बढ़ाकर या खिंचाव के भीतर मेश के ल्यूमेन के बन्दी के नियंत्रण द्वारा। ऊपर के मेश के आकार को बढ़ाया नहीं जा सकता। दूसरा प्रत्यावर्तन है ट्रॉल में उपयुक्त क्षेत्र में वर्ग आकार मेश का उपयोग। वर्ग मेश गवाक्षा की संलगनी एक प्रमाणित सरल उपपकड़ घटाव तकनीक है। जाल एवं कोड़ एन्ड के ऊपरी भाग में गवाक्षा के रूप में इस वेबिंग भाग को संलग्न किया गया है। आकार एवं मत्स्य की जातियों को निष्कासित होने के अनुसार वर्ग मेश के आकार को निर्धारित किया जाता है। इसे भी पर्यावरण-अनुकूल मत्स्यन ही माना जाएगा।

कछुआ अपवर्जन युक्ति

समुद्री कछुआ एक संकटापन्न जाति है। उनकी सुरक्षा के लिए विश्वभर में विभिन्न सुरक्षा उपाय अपनाये गये हैं। भारत में इसे भारतीय वन्यजीव सुरक्षा अधिनियम के अधीन सुरक्षित घोषित किया गया है। समुद्री कछुओं की सुरक्षा के लिए विश्व समुदाय ने बहुत प्रमुखता दी है। संयुक्त राज्य अमेरिका तभी समुद्री झींगों को आयात करने की अनुमति देता है जब उसके साथ प्राधिकृत अधिकारी के इस आशय का प्रमाण पत्र हो कि कछुआ अपवर्जन युक्ति लगाए ट्रॉल से झींगों को पकडा गया है। इस के परिणाम स्वरूप, विश्वभर में कछुओं के अपवर्जन के लिए कुछ युक्तियों का उपयोग अब ट्रॉल शिकार में किया जा रहा है। कछुआ अपवर्जन युक्ति (TED) एक विशेष उपकरण है कि खिंचाव के दौरान कछुआ के पलायन करने से ट्रॉल जाल में कछुआ शिकार की आकस्मिक मृत्यु कम होती है।

भारत में, विशेषकर पश्चिम बंगाल, उडीसा, आन्ध्रा प्रदेश, तमिलनाडु और केरल के दक्षिण भाग कछुओं का आकस्मिक शिकार रिपोर्ट किया गया है। ट्रॉल से कछुओं के पलायन के लिए विश्वभर में विभिन्न प्रकार के मार्गदर्शन निर्धारित किये गये है। केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिक संस्थान ने इस समस्या को विस्तृत रूप में अध्ययन किया है और भारतीय परिस्थिति के लिए को उपयुक्त कछुआ-अपवर्जन निष्कासित युक्ति के देशी रूप को अभिकल्पित किया है। केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिक संस्थान का टेड 100' - 800 मि मी आकार के खुलाव का एकल अण्डाकार मार्गदर्शन है। भारत में लोकप्रिय छोटे व मध्यम आकार के यंत्रीकृत ट्रॉलरों में इसे प्रयुक्त किया जाता है। केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिक संस्थान द्वारा विकसित टेड में कछुओं के सौ प्रतिशत पलायन सुनिश्चित है जब कि इस के द्वारा मत्स्य एवं झींगों का पलायन बहुत कम है। कछुओं को बचाने योग्य इस मत्स्यन-रीति के आविष्कार के पीछे जीव-सुरक्षा और पर्यावरण-सुरक्षा मुख्य उद्देश्य हैं।

मेश आकार को नियमित करने से किशोर एवं छोटे मत्स्यों को अपवर्जित किया जा

के.मा.प्रौ.सं. टेड से कछुआ बाहर निकलता है।

सकता है और कोडएन्ड में बड़े मत्स्य ही प्राप्त होते हैं। भारतीय परिस्थितियों के अधीन परिचालन के लिए उपयुक्त अरीय पलायन प्रणाली को के मा प्रौ सं ने अभिकल्पित किया है और मत्स्य परीक्षण के लिए फोटोप्ररूप तैयार है।

मत्स्य आंख

यह और एक युक्ति है जो मत्स्य के पलायन की व्यवस्था करती है, विशेषकर कोडएन्ड से छोटे आकार के मत्स्य केलिए। यह 10 से मी उच्च एवं 30 से मी चौड़ाई से 6 मि मी व्यास स्वच्छ इस्पात रोड के सहायक ढाँचे अण्डाकार संरचना से युक्त है। इसे कोडएन्ड के ऊपरी भाग में संलग्न किया जाता है जिस में कि पलायन खुलाव उपलब्ध हो। यह खुलाव मत्स्य के पलायन की व्यवस्था करता है जिस से कोडएन्ड के एन्ड से पीछे गिरने की कोशिश होती है। यह युक्ति भी किशोर एवं प्रौढ़ के अपवर्जन एवं बडे मत्स्यों की पैदावर करती है।

के मा प्रौ सं ने पहले ही दो विभिन्न आकार एवं रूप के मत्स्य आंख को अभिकल्पित एवं संरचित किया है।

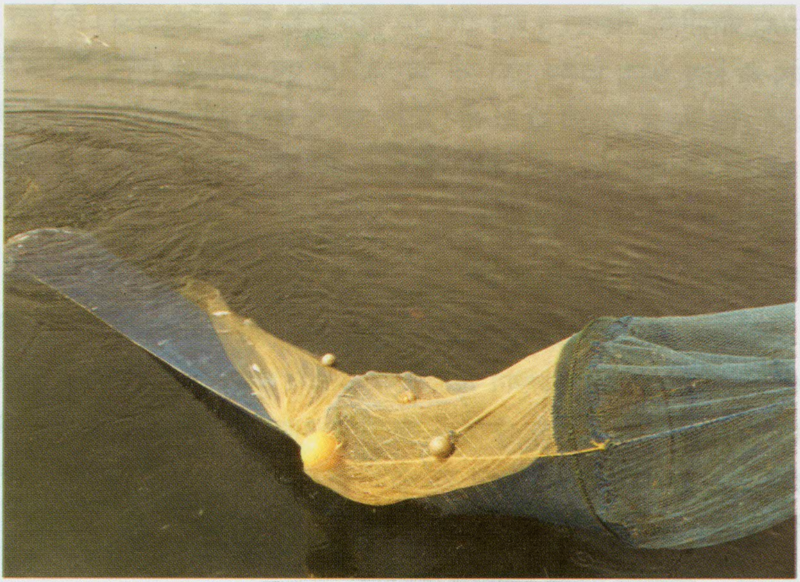

अरीय प्रकार की पलायन प्रणाली

अर्ध-वेलापवर्तियों के लिए संपदा विशेष ट्रॉल

ट्रॉलिंग के दौरान अलक्षित मत्स्य जाति और उसके किशोर मत्स्य और साथ-साथ लक्षित जाति के किशोर मत्स्य भी पकडे जाते हैं। नितलस्थ समुदायों पर इस स्थिति से प्रतिकूल प्रभाव उत्पन्न होता है। अगर हम अर्ध-वेलापवर्ती संपदा के लिए संपदा विशेष ट्रॉल नियोजित करें तो नितलस्थ जीव जात पर इसके प्रतिकूल प्रभाव को कम किया जा सकता है। इस दृष्टि से केन्द्रीय

मत्स्य आँख

मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान ने तल ट्रॉल की परिवर्ती के रूप में लघु-उद्योग यंत्रीकृत सेक्टर के उपयोग के लिए संपदा विशेष ट्रॉल को अभिकल्पित एवं विकसित किया है। यह पर्यावरणीय सहयोगी ट्रॉल गिअर प्रणाली दो या तीन मीटर तल के ऊपर सक्रिय होता है। तल के नज़दीक जल कॉलम में लक्षित संपदा को संचित करता है और तल वनस्पति और अन्य अलक्षित मत्स्य निवास क्षेत्र में कम क्षति पहूँचाता है।

मत्स्य संसाधन क्षेत्र द्वारा प्रदूषण

पर्यावरण को सबसे ज्यादा संकट पहूँचानेवाला और मानव जाति पर सीधा प्रभाव डालनेवाला प्रदूषण शायद मत्स्यन गिअरों की अपेक्षा समुद्री खाद्य संसाधन क्षेत्र से है। इस उद्योग के विकास एवं विस्तार के साथ यह संकट बहुत ही खतरनाक हद तक बढ़ रहा है। केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान का सामयिक मध्यस्थता से इस समस्या के नियंत्रण एवं निरोध में बहुत ही सहायता मिली है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं।

पर्यावरण - अनुकूल मत्स्य संसाधन तकनीक

हमारे देश के पूर्व एवं पश्चिमी तटों के साथ अन्य कई मत्स्य संसाधन यार्ड हैं। परम्परागत रूप से लवणित या अलवणित मत्स्यों को खुले समुद्रतट पर रेत में या कायर- चटाई, सिमेन्ट प्लाटफार्म आदि पर फैलाकर शुष्कित किया जाता है। उस अवसर पर शुष्कित मत्स्य, अर्ध-बिगाड़े मत्स्य और लवणन टैंकों के निःस्रवण लवण और प्रसाधन जैसे मत्स्य संसाधन से परिसर प्रदूषित हो जाता है। मत्स्य के लवणित, शुष्कित और संवेष्टन की स्वास्थ्यकर पद्धतियों को केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान ने विकसित एवं लोकप्रिय बनाया है। मत्स्य संसाधन के लिए इन तकनीकों के अनुपालन करने से पर्यावरण के प्रदूषण को रोकने में विशेष सहायता प्राप्त हो सकती है।

प्लाटफार्म पर लवणित/अलवणित मत्स्य का शुष्कन और ज़मीन से करीब 1 मी ऊपर लगाए रैक से शुष्कित उत्पाद गुणता की बढ़त की दृष्टि से अच्छी साबित हुई है। पर्यावरणीय निम्नीकरण को भी इस से रोका जा सकता है। सोलार ड्रायर में मत्स्य शुष्कन, जहाँ पर सोलार शक्ति का अभिमुख है और उत्थित तापमान के पास शुष्कन प्रक्रिया को प्रदूषण मुक्त वायुमंडल में नियंत्रित परिस्थितियों में विकसित किया जा सकता है।

झींगा संसाधन रद्दी से काईटीन एवं काईटोसन

भारत के मत्स्य संसाधन उद्योग के विकास ने पर्यावरणीय निम्नीकरण को भी उत्पन्न किया है। इस क्षेत्र का अग्रगामी उद्योग झींगा-संसाधन मुख्य दोषी है। शीर्ष एवं कवच सहित झींगों का लगभग 50% रद्दी है। वर्ष में भारत से संसाधित झींगों का 4.4 लाख निर्यात हो जाता है।

मत्स्य शुष्कन के रैक

तकरीबन उतनी ही मात्रा में रद्दी भी उत्पन्न हो जाती है। उसके उपयोग के लिए कोई लाभदायक पद्धति आविष्कृत नहीं है, शुष्कन के लिए रद्दी को अक़्सर ज़मीन पर फैलाया जाता है। पश्च जल को जलनिकायों के नज़दीक उसे फेंका जाता है। विकृत रद्दी की बदबू, तालाबों तथा नज़दीकी कुओं, नहर के जल की गति को बाधा पहूँचने के साथ-साथ मच्छर की अनियत्रित बढ़त भी होती है।

आजकल इससे हम मुक्त हो चुके हैं। झींगा रद्दी या किसी क्रस्टेशियन रद्दी को रद्दी के रूप में आज देखा नहीं जा रहा है। केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान ने अपने अनुसंधान एवं विकास निवेश से यह प्रमाणित किया है कि यह उच्च मूल्य औद्योगिक उत्पाद की और एक कच्ची सामग्री है। रद्दी में भी संपदा निहित है।

केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान ने सत्तर के दशक में झींगा रद्दी के उपयोग से लाभप्रद अनुसंधान कार्यक्रम प्रारंभ कर दिया था। झींगा रद्दी से काईटीन एवं काईटोसन का उत्पादन केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान द्वारा विकसित अंतर्राष्ट्रीय स्वीकार्य प्रौद्योगिकी है।

आज, भारत में केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान ही इस प्रौद्योगिकी का परामर्शदाता है। केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान के तकनीकी-मार्गदर्शन के अधीन कईटीन/काईटोसन के प्लांट तैयार किए जा रहे है। सफलता की यह कहानी समाप्त नहीं होती है। केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान प्रौद्योगिकी की उत्कर्षता से प्रभावित होकर, संयुक्त राष्ट्र संघ का खाद्य एवं कृषि संगठन ने काईटीन/काईटोसन की तकनीकी जानकारी के लिए और फिलीपिन्स की सरकार के लिए वाणिज्यिक प्लांट की स्थापना के लिए परामर्शदाता के रूप में के मा प्रौ सं को

झींगा कवच रद्दी और काइटिन

अभिज्ञात किया है। निर्धारित समय-सीमा के भीतर इन दोनों कार्यों को केन्द्रीय मात्स्यकी प्रौद्योगिकी संस्थान ने पूरा करने का रिकार्ड स्थापित किया है और संस्थान ने एफ ए ओ और फिलीपिन्स सरकार से सम्मान प्राप्त किया है। इसका प्रदूषण की मुक्ति के सन्दर्भ में मूल्य अननुमानित हैं।

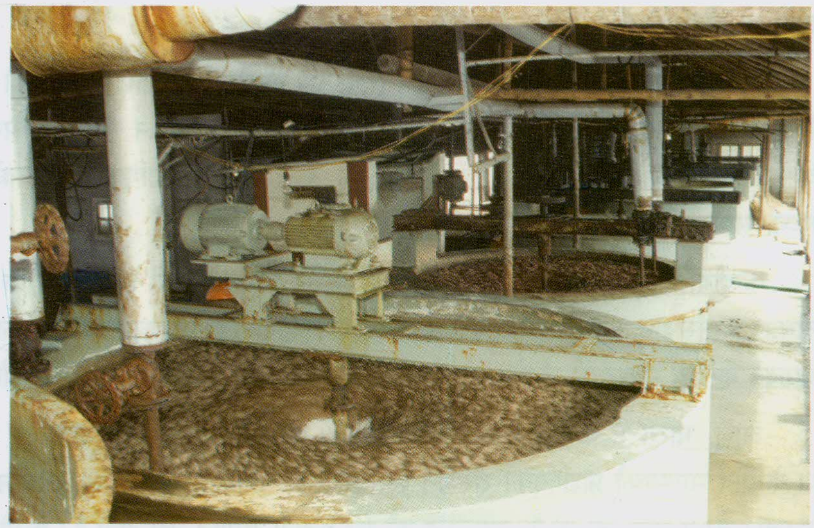

काइटोसन संयंत्र

मत्स्य चारा

भारत में वाणिज्यिक स्तर पर झींगे एवं मत्स्य का वैज्ञानिक पालन के तीव्र विकास के

साथ भारी मात्रा में गुणता आवश्यकता के लिए संयोजित चारे की आवश्यकता उत्पन्न होती है। गुणता स्वीकार्यता के अनुसार देशी रूप में उपलब्ध चारा मुख्यतः पोषकीय रूप में युक्त है। जबकि आयातित चारा बहुत ही कीमती है। इसके अलावा, सख्त गुणता जाँच की अनुपस्थिति में अक्सर खराब भी होता है। प्रतिजैविकी का संयोजन करने से गुणों की उन्नति की बढ़त हो सकती है बल्कि खेती किए झींगों में और उसे खानेवालों में भी प्रति जैविक प्रतिरोध जीवाणु की उपस्थिति पायी गयी है। इस स्थिति में के मा प्रौ सं ने खेती किए गये झींगों/मत्स्यों के लिए देशी चारा जो सभी गुणता और पोषकीय आवश्यकताओं को पूरा करने का विकास का कार्य अपने कंधे पर ले लिया। झींगा रद्दी, विविध मत्स्य रद्दी और स्थानीय रूप में उपलब्ध सामग्रियाँ नियोजित कच्ची सामग्री है। यह विकसित प्रौद्योगिकी एकदम सरल है और कोई भी कार्यकुशल कृषक कम सुविधाओं के तहत इसे अपना सकता है। वाणिज्यिक खेतों पर किए गए परीक्षणों ने यह दिखाया है कि झींगा रद्दी से बना चारा अन्य वाणिज्यिक चारों की तुलना में अच्छी प्रोटीन क्षमता अनुपात और चारा परिवर्तन अनुपात में बहुत आगे है।

मत्स्य चारा

कुक्कुड चारा

झींगा रद्दी एवं अन्य स्थानीय रूप में उपलब्ध कच्ची सामग्री से संयोजित कुक्कुट चारे के उत्पादन के लिए के मा प्रौ सं के पास समान सरल प्रौद्योगिकी उपलब्ध है । काईटीन बहुत ही प्रभावी समर्थक के रूप में पाया गया है। कुक्कुट चूज़ों, प्रजनकों के लिए चारा और प्रौढों के लिए सान्द्र को भी विकसित किया गया है।

मत्स्य आंत से शल्य सीवन

झींगा रद्दी की तरह मत्स्य रद्दी से होने वाले पर्यावरणीय संकट से भी के मा प्रौ सं सचेत है। इस समस्या को नियंत्रित करने के लिए के मा प्रौ सं अवशोष्य शल्य सीवन का विकास किया है, जो मत्स्य आंत से तैयार किया जाता है, बाज़ार में उपलब्ध किसी उच्च गुणता सीवनों से भी तुलनीय है।

सुअर, घोडा, बकरी जैसे जानवरों की आंत से बनाए झिल्लीमय रज्जू, यानी आँत से वाणिज्यिक तौर पर सीवन बनाया जाता है। बहुराष्ट्रीय कम्पनी द्वारा निर्मित सुप्रसिद्ध ब्रैंड का उत्पादन कीमती है। समुद्री एवं स्वच्छ जल मत्स्य स्रोत के मत्स्य आंत से के मा प्रौ सं ने परीक्षण चलाया। यद्यपि दोनों प्रकार की आंतों से सीवन तैयार किया जा सकती है। फिर भी स्वच्छ जल मत्स्य जैसे मेजर कार्प की आंतें प्रमुख सीवन प्रक्रिया, तकनीकी एवं आर्थिक रूप में, विशेषकर सूक्ष्मता, व्यास में एकरूपता, लम्बाई, उपयुक्त शक्ति आदि में ज्यादा व्यवहार्य है। संकरण-संबंध और पॉलीमर आवरण द्वारा मत्स्य आंत कोलाजन से अतिरिक्त कोमल सीवन के संसाधन के लिए के मा प्रौ सं प्रौद्योगिकी का विकास कर सकता है। नेत्र एवं सूक्ष्म शल्यक्रियाओं के लिए यह उत्पादन आदर्श है। मोटाई, एकरूपता विभंजन सामर्थ्य जैसे भौतिक गुण में वाणिज्यिक नमूनों की तुलना में मत्स्य-आंत-सीवन अच्छ है। उत्पाद कोई असामान्य विषाक्तता या ऊतक प्रतिक्रिया नहीं दिखाता है।

के मा प्रौ सं ने चिकित्सकों के सहयोग से उपयुक्त क्षेत्र परीक्षण के द्वारा शल्य अनुप्रयोग में उसकी बहुमुखता और पायलेट स्तर उत्पादन द्वारा उत्पाद की तकनीकी - आर्थिक व्यवहार्यता

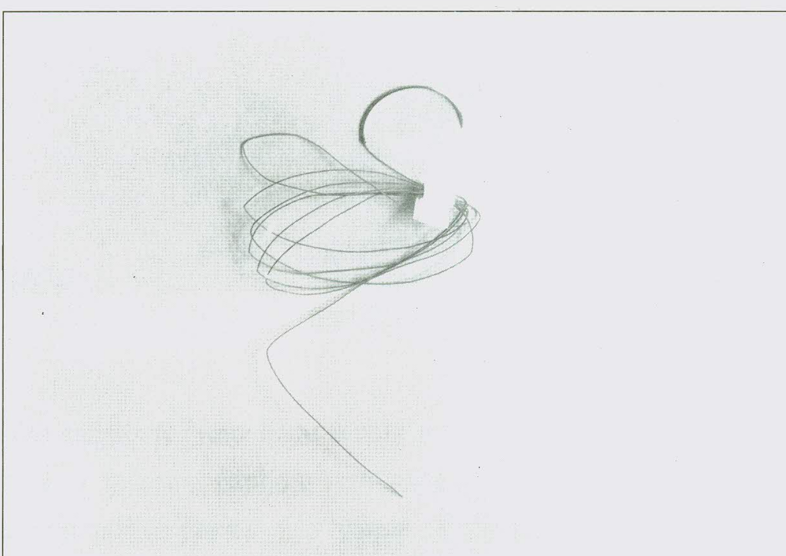

मत्स्य आंत से शल्य सीवन

को स्थापित किया है। आज तक इस प्रौद्योगिकी ने माँग उत्पन्न की है और संस्थान ने पहले ही उत्पाद के निर्माण के लिए निजी ढेकेदारों से परामर्श व्यवस्था में प्रवेश किया है। समय दूर नहीं है कि अनुपयोगी रद्दी, मत्स्य-आंत, भविष्य में उद्योग की मूल्यवान कच्ची सामग्री होगी।

अलाभकार एवं सामान्यतः रद्दीकृत मत्स्य की उपयोगिता

जैसे अन्यत्र सूचित है भारतीय मात्स्यकी में कई जातियों के मत्स्य उपलब्ध हैं। मत्स्यन में ज़ोर झींगों पर दिया जाता है और ट्रॉल शिकार में झींगा कुल केवल 10% से भी कम, बाकी विविध मत्स्य होते हैं। टेबल मत्स्य को बहुत ही आसानी से बेचा जा सकता है। बाकी के मत्स्य का सीधे मानव उपभोग या कुछ हद तक का संसाधन के निपटान की समस्या हमेशा है। और तो और ज़ोर झींगों पर ही है। ट्राल बोर्ड पर अन्य जाति मत्स्यों के लिए उचित हस्तन एवं परिरक्षण के लिए ज्यादा ध्यान नहीं दिया जाता है। इस से शिकर के मुख्य भाग को समुद्र में फेंका जाता है। विशेषकर भारी अवतरण में मत्स्यन बंदरगाह के जल में को बिगाडे मत्स्य तैरते देखा जाना सामान्य दृश्य है। यह बंदरगाह एवं तटीय जल में प्रदूषण को उत्पन्न करने का प्रमुख स्रोत है। हज़ारों टन ऐसे अलाभकर मत्स्य रद्दीकृत होने के कारण एक तरफ पर्यावरण को बिगडता है दूसरी ओर उच्च पोषकीय प्रोटीन खाद्य रद्दीकृत हो जाता है।

इस समस्या के निपटान के लिए के मा प्रौ सं ने कुछ उपाय निकाले। पहले कदम के रूप में संस्थान ने ऐसे मत्स्य के उपलब्ध सभी जातियों का विस्तृत विश्लेषण प्रोटीन के प्रभाजन के साथ रासायनिक संयोजन के लिए किया और इस संबंध में किसी टेबल मत्स्य की तुलना के लिए स्थापित किया है। उनकी पोषकीय गुणता समान पायी गयी। कुछ मामलों में टेबल मत्स्य

निम्न मूल्य के मत्स्यों से उन्नत मूल्य उत्पादन

उस से भी अच्छे है। संस्थान ने पाया कि स्वीकार्य आवरण से ऐसे मत्स्य की अस्वीकार्यता को दूर किया जा सकता है। कुछ बड़े मत्स्यों के मामलों में हड्डी एवं त्वचा निकाले फिलेट की तैयारी और बहुत छोटे छोटे मत्स्यों के मामले में मिन्स में परिवर्तन आदर्श पाया गया है। कई मूल्य जोड़ सुविधाजनक खाद्य की तैयारी के लिए मिन्स को आधार के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है, जिस के लिए अवश्यक प्रौद्योगिकी आधार भी संस्थान द्वारा विकसित किया गया है और उसकी तकनीक और आर्थिक व्यवहार्यता को भी निष्पादित किया गया है। विभिन्न प्रकार के बैटेड एवं ब्रिडेड उत्पाद जैसे कई मूल्य जोड़ सुविधाजनक खाद्य की वाणिज्यिक सफलता प्रमाणित हुई है और देश और विदेशों में विपणन किया गया है। के मा प्रौ सं के प्रयासों द्वारा राष्ट्र को प्राप्त फायदे अनेक हैं। आज किसी भी मत्स्य को रद्दीकृत नहीं किया जाता है और पहले की तरह बिगडे मत्स्य के कारण पर्यावरण की विकृति नहीं होती है। दूसरा, मूल्य जोड़ प्रोटीन खाद्य जिसे रद्दीकृत किया जाता था अब मूल्य जोड़ के रूप में मानव उपभोग के लिए उपलब्ध है। तीसरा, यह पहल ग्रामीण गरीबी के उन्मूलन स्तर में विशेष सहायक है। अंततः इस मत्स्य को किसी भी रूप में उपयोग किये जाने के कारण मछुवारे मत्स्यन परिचालन से अच्छा धन प्राप्त कर रहे हैं और ऐसे मत्स्य को जहाज़ पर हस्तन एवं संग्रहण में पर्याप्त उपलब्धता पर ध्यान देना प्रारंभ किया है।

मत्स्य संसाधन संयंत्रों के बहिःस्राव का उपचार

समुद्री खाद्य संसाधन उद्योग एक ऐसा उद्योग है जिस में पानी का उपयोग ज्यादा मात्रा में होता है। विभिन्न प्रकार के उत्पादों का प्रक्षालन, परिरक्षण, प्रसाधन, पकाना, सफाई, रोगाणुनाशन जैसे कार्यों के लिए जल का ज्यादा उपभोग होता है। यह आकलित किया गया है कि प्रति किलोग्राम के झींगे के संसाधन में 12 लिटर जल का उपभोग होता है। करीब 10 लाख टन मत्स्य एवं मत्स्य उत्पादों के संसाधन एवं निर्यात के लिए उपयुक्त होनेवाली जल-मात्रा को आकलित करने से चौंका देने वाला आँकडा सामने आ सकता है। निर्यात के अलावा, विकसित उद्योग, घरेलू बाज़ार आदि की ओर भी लक्ष्य किया गया है। स्वाभाविक रूप में मत्स्य संसाधन उद्योग द्वारा उपभोगित जल की मात्रा अधिक है। इस विकास की दुःखद है कि जल उपभोगिता की मात्रा बहुत ज्यादा होने पर भी पुनः प्राप्ति, शुद्धीकरण और पुनःचक्रण की आर्थिक आय नहीं है।

सामान्यतः अपशिष्ट जल को नज़दीकी जल निकायों में छोड़ा जाता है जिससे कि वह प्रदूषित होता है और वनस्पति जात को गंभीर संकट उत्पन्न होता। नज़दीकी। संसाधन संयंत्रों के अपशिष्ट जल के कारण समस्या बहुत ही प्रखर होने के कारण कई राज्यों में प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने संसाधन संयंत्र के अवाभूत के रूप में अपशिष्ट जल उपचार प्रणाली को कानूनी आवश्यकता के रूप में शामिल किया है। फिर भी मत्स्य संसाधन संयंत्र का बहिःस्राव अन्य

प्रदूषित उद्योगों की तुलना में बहुत भिन्न है। इसके उपचार के लिए सहज समाधान उपलब्ध नहीं है। कई अन्य मामलों की तरह के मा प्रौ सं इस संबंध में भी आगे है। विस्तृत अध्ययन के बाद बहुत ही उपयुक्त समाधान के साथ संस्थान आया है।

के मा प्रौ सं ने बहि:स्राव के स्वभाव एवं संयोजन पर प्रारंभ में अध्ययन किया और निम्न सूचनाएँ उपलब्ध करायी है।

बहि : स्राव उपचार संयत्र

* 45-465 मि.ग्र./ली. निलंबित पिंड के बहुत ही उच्च स्तर को बहि:स्राव जल अंतरविष्ट होता है। जल निकाय के निचले भाग में निलंबित पिंड सादनित होता है और वनस्पति जात और खाद्य-चैन को प्रतिकूल प्रभावित करता है; यह जल निलंबित धूप के वेधन को कम करता और इससे जलीय जीव प्रभावित होते हैं।

* बहि:स्राव का उच्च कार्बनिक भर के परिणाम स्वरूप क्रमानुसार 2 और 93 मि ली/ली. और 13 और 913 मि.ग्रा/ली उच्च BOD और COD के बीच होता हैं और जलीय जीवन को प्रभावित करता है।

* कार्बनिक पदार्थ का वियोजन बू उत्पन्न करता है जो. लोगों में उबकाई और दबाव उत्पन्न करती है।

* बहि:स्राव का PH 5 से 7.5 के बीच होता है।

* कार्बनिक पदार्थ के विकार के परिणाम स्वरूप नईट्रोजन एवं फॉस्फरस जैसे पोषक जल निकाय में युक्त होते हैं यह शैवाल के प्रजनन को उन्मुक्त करते और जलीय जीवन को

प्रेतिकूल रूप में प्रभावित करते है।

* बहि:स्राव में कुल अवशेषीय क्लोरिन का रेंज 0-16 मि ग्रा/ली है, जब कि समुद्र स्वच्छ जल जीव सहन सीमा 0.01 मि ग्र/ली है।

* बहि:स्राव हल्के रंग में है।

के मा प्रौ सं द्वारा उपचार संयंत्र के अभिकल्प में मार्गदर्शी सिद्धांत और प्रक्रिया प्रौद्योगिकी के साथ-साथ परिचालन की आर्थिकी की पर्याप्तता को भी अपनाया गया। विकसित अभिकल्प एवं प्रक्रिया उपयोगी सहयोगी, शक्ति कार्यक्षम, लागत प्रभावी और अनुरक्षण आसान है। प्रचालन व अनुरक्षण जटिलता की परवाह किए बिना स्थापित हाई-टेक संयत्रों को के.मा.प्रौ.सं. के अभिकल्पित संरचना में बदल रहे हैं।

के मा प्रौ सं द्वारा अभिकल्पित संयंत्र 75000 लीटर के अपशिष्ट जल प्रतिदिन हस्तन करता है। इस प्रणाली में बहि:स्राव के एकत्रण के लिए 5 m^3 क्षमता की टैंक होती है। इस टैंक में एकत्रित अपशिष्ट जल एक व्यवस्थापन टैंक, जिसके शंकुरूप है, फिटकरी डोज़र के ज़रिए पम्प करता है। अंत: क्षेपण एवं स्कंदन मिश्रण के लिए एक पाइप प्रवाह-प्लग प्रवाह मिश्रक का उपयोग करता है। स्कंदन के मिश्रण के बाद बहि:स्राव को आयतकार कॉन्क्रीट सादन टैंक में रातभर रहने को अनुमत किया जाता है। परिचालन को ज़ारी रखने के लिए पास-पास ऐसे दो टैंकों को उपयोगित किया जाता है। सादन टैंक को एक मलफेन पृथकित्र को भी संलग्न किया गया जहाँ से मलफेन रेती तल को उसे शुष्क करने स्थानांतरित किया जाता है। सादन टैंक के शंकुरूप में एकत्रित कीचड़ को पम्प सुविधाजनक रूप में निकालकर रेती तल में शुष्कन के लिए फिर से जाता। पथरी तल पर सफाईकृत बहि:स्राव को पम्प किया जाता जहाँ वायुजीवाणु द्वारा उस पर यह कार्य होता है। यह उच्च शक्ति कार्यक्षम और यंत्रीकृत वातक टैंक के उपयोग की तुलना में अनुरक्षण मुक्त प्रक्रिया है। वातन के बाद, एक बंधक मिश्रित में क्लोरीन के उपभोग द्वारा बहि:स्राव को विसंक्रमित किया जाता है। बहि:स्राव को क्लोरीन डोजिंग के बाद उस के निष्कासन से पहले गुरुत्व विक्लोरीनीकरण टैंक द्वारा गुजारता है।

पर्यावरणीय निम्नीकरण को घटाने में के मा प्रौ सं के अग्रगामी योगदानों का यह एक संक्षिप्त लेखा जोखा है। मत्स्यन एवं मत्स्य संसाधन के फार्मों को रोके बिना स्वच्छ एवं स्वस्थ पर्यावरण को प्रेरित करने के लिए संस्थान ने अपने आप को पुन: समर्पित किया है।